।। ओ३म् ।।

भागवत की असलियत

लेखक :-

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

लेखक :-

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

फोन ~~न० 09410049191~~ 9759528862-963450953

महर्षि दयानन्द वैदिक संन्यास आश्रम

शिकार पुर रोड़ नया गाँव बुलन्द शहर उ०प्र०

सम्पादक :-

आचार्य भवभूति आर्य

आर्ष गुरुकुल, आर्य समाज,आर्य नगर

पहाड़गंज नई दिल्ली -५५

चतुर्थ संस्करण :- १००० दिसम्बर २००८ ईसवीं

मूल्य २० रुपये मात्र

पुस्तक प्राप्ति स्थान :-

१- महर्षि दयानन्द वैदिक संन्यास आश्रम
शिकार पुर रोड़ नया गाँव बुलन्द शहर उ०प्र०

२- आर्य समाज मन्दिर, दादरी जिला गौतम बुद्ध नगर उ०प्र०

३- आर्य समाज, आर्यनगर ,पहाड़गंज नई दिल्ली -११००५५

सम्पादकीय

संसार में असंख्य योनियां हैं इन सभी योनियों में मानव सर्व श्रेष्ठ योनि है। परमेश्वर की असीम अनुकम्पा से मानव को जो बुद्धि प्राप्त हुई है, जिसके द्वारा कठिन से कठिन कार्य को सुगमता पूर्वक हल कर सकता है, जब उस बुद्धि का उचित प्रयोग नहीं करता तो वहाँ पर हानि कर बैठता है। मानव ने जब इस संसारचक्र पर विचार करना प्रारम्भ किया तब अनेक समस्याएं आ खड़ी हुई, जिसका समाधान कैसे करें? जब कहीं किसी विषय में संशय पैदा होता है, तब मानव बुद्धि के बल से ही समाधान निकालता है। और परीक्षा की कसौटी पर कस कर संशय को मिटाता है।

भारत के इतिहास में भी अनेक स्थानों पर ऐसा धुंधला आवरण पड़ा हुआ है कि कोई वृत्तान्त यथार्थ रूपेण ज्ञात नहीं होता और न विद्वत जन ध्यान देकर जानने का विचार करते हैं। भ्रमों और कल्पनाओं की भर मार जहाँ तक अतियुक्ति से हो सकती है वह तो सब कुछ किया गया हैं। किन्तु सत्यस्वीकरण और योग्य मानवों का यथार्थ चित्रण जैसे कि वे थे ऐसा कहीं भी नहीं है। सब को कलंक लगा कर कालिमा फेरदी है यदि सच्चा इतिहास है तो वह बहुत ही थोडा है। महाभारत के काल के बाद जो पुराणों की रचना हुई उसमें मनगढ़त कथाओं की भरमार है। इस लघु पुस्तिका में पूज्य स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी ने कुछ ऐतिहासिक कथाओं को भागवत पुराण से विवेचनात्मक अध्ययन करके सत्य-असत्य को पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया है। यदि आप स्वतन्त्र बुद्धि से इस पुस्तक का अध्ययन करेगें तो स्वयं ही हकीकत को जान जायेगे। और वास्तविकता को जान कर भ्रम जाल से बच सकते हैं।

आचार्य भवभूति आर्य
आर्ष गुरुकुल ,आर्य समाज ,
आर्य नगर पहाड़गंज नई दिल्ली-५५

ओ३म्

सम्मति

पूज्यपाद स्वामी शिवानन्द सरस्वती ने अनेक वर्षो तक भागवत का अध्ययन करने के बाद तथा प्रचार प्रसार करने व महर्षि दयानन्द सरस्वती व उनके उपकार मानव जाति पर कितने अपार हैं उनकों समझकर अपना जीवन आर्य समाज के प्रचार में लगाएं हुए हैं। उन्होंने जो भी भागवत का सत्य यहाँ लिखा है। वह सप्रमाण है। क्योंकि जो महर्षि वेद व्यास के नाम से अनर्गल प्रचार करके समाज को गुमराह किया गया है उसकी वास्तविकता बताना आर्य उपदेशकों का महत्वपूर्ण कर्त्तव्य है। भटका हुआ समाज सही रास्ते पर आए, इस पुस्तक का भी यही मुख्य उद्देश्य है। महर्षि दयानन्द जी ने जब पुराणों को पढ़ा और देखा कि ज्येष्ठ महीने की एकादशी को निर्जला एकादशी लिखा तो स्वामी जी ने लिखा, कि हे भागवत लिख ने वाले लाल बुझक्कड़ यदि तू अपनी माँ के गर्भ में ही मर गया होता तो आज आर्य जाति को इतने कष्ट सहने न पड़ते तथा जितने मुसलमान ईसाई वामपन्थी आदि जितने मतमतान्तर हैं,यह सब इन पुराणों के गपोड़ो का परिणाम है। आज भी बृज आदि क्षेत्रों में भागवत का भंयकर प्रचार है। इस पुस्तक को पढ़ने के बाद कोई भी भागवत पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना पसन्द नहीं करेगा, इसलिए वह इस पाप रूपी कलंक से बच जायेगे मैं चाहता हूँ कि इस पुस्तक का बहुत प्रचार प्रसार होना चाहिए ।

विश्वानन्द सरस्वती
आर्ष गुरूकुल विजय नगर (दखौला)
पो०पींगरी, जि० मथुरा उ० प्र०
मो०-९८९७७४२१७७

ओ३म्

विशेष सहयोग

श्री भानुप्रताप आर्य भजनोपदेशक जी ने इस पुस्तक के प्रकाशन में ग्यारह सौ रूपये का सहयोग दिया। श्री भानु प्रताप जी आर्य जगत् के एक कुशल भजनोपदेशक हैं। आप ग्राम पारपा जिला गाजियाबाद के रहने वाले हैं। आपने आजीवन व्रह्मचारी रहकर वेद प्रचार करने का व्रत लिया है। आपने जीवन में सैकड़ो युवाओ को आर्य समाज में दीक्षित किया है।

आप महर्षि दयानन्द के सच्चे भक्त हैं। और गुरुकुल एवं आश्रमों की तन,मन,धन से सेवा करतें हैं।

परमात्मा ऐसे धर्मनिष्ठ भजनोपदेशक को सुख शान्ति और दीर्घायु प्रदान करें।

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

भूमिका

श्रीमद्भागवत् महापुराण का प्रचार सम्पूर्ण अठारह पुराणों में सबसे अधिक है। इसका पढ़ना और सुनाना बड़ा पुण्य का कार्य माना जाता है। वैष्णव समाज में गीता, विष्णु पुराण, तथा भागवत पुराण ये तीन प्रधान ग्रन्थ हैं। भागवत की कथा करने वाले अच्छे-२ विद्वान देश में विद्यमान हैं। हमने अन्य पुराणों के पारायण के साथ ही भागवत पुराण का अध्ययन भी तीन बार किया है। इस ग्रन्थ को पढ़ने से ऐसा लगता है कि इस पुस्तक का लेखक भारतवर्ष का और इसकी संस्कृति का कट्टर दुश्मन था, क्योंकि जहां तक उसका वश चला है वहां तक ऋषिओं को कलंकित करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। हिन्दुओं को तो इससे हानि ही हानि हुई है, इस का लाभ हुआ है मुसलमानों और ईसाइयों को। हिन्दुओं का मुंह बन्द करने का उन्हें यह अच्छा हथियार मिल गया है। भागवत की रचना वेद-उपनिषद तथा सम्पूर्ण वैदिक शास्त्रों का विरोध करके अपने भागवत पन्थ के सिद्धान्तों के प्रचार के लिये की गयी थी। स्वयं भागवत में स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि वेद शास्त्र आदि को पढ़ने से मनुष्य की बुद्धि में भ्रम उत्पन्न हो जाता है। अतः सबको छोड़कर केवल भागवत को ही पढ़ना चाहिये। यह बात भागवत कार ने इसलिये लिखी थी कि यदि लोग वेदादि सद्ग्रन्थों को पढ़ेंगे तो भागवत की सारी जालसाजी का पता चल जायेगा और वे भागवत का विरोध करने लगेंगे। यह सत्य भी है। क्योंकि आज भागवत की पोल वे ही लोग खोलते हैं जो वैदिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करते हैं।

भागवत में श्री कृष्ण आदि सभी महापुरूषों को व्यभिचारी पर स्त्री गामी,ब्रह्मा से असुरों को अप्राकृतिक कुकर्म तथा ऋषि मुनियों को कलंक लगाये हैं भागवत में गल्पों का विशाल भंडार है जो कि सारा कपोल कल्पनाओं पर आधारित है श्री कृष्ण जी के सारे जीवन चरित्र को भागवत ने सर्वथा भ्रष्ट कर दिया है। मांसाहार, मद्यपान यज्ञों में पशु बलि, नर, बलि, सती प्रथा आदि का भागवत खुला समर्थन करता है।

मेरे जीवन की एक घटना है जिससे आप समझ जायेंगे कि भागवत से आज भी देश की कितनी और क्या हानि हो रही है दस मई सन् २००५ को मैं मुम्बई से हवाई जहाज में बैठकर दिल्ली को चला। जहाज मुम्बई सान्ताक्रुंज हवाई अड्डे से नो बजे रात्रि में उड़ा। थोड़ी देर उड़ने के बाद जहाज मे रहने वाली (एयर होस्टेस) लड़कियां भोजन देने लगीं। भोजन देते समय पूछती थी कि आप शाकाहार लेगे या मांसाहार ? उसमें अधिक लोग विदेशी थे, वह जहाज विदेश जा रहा था मुझे तो बस दिल्ली आना था। अधिकतर लोगों ने मांसाहार मांगा। जब मुझसे पूछा तो मैने कहा कि मैं कुछ नहीं खाऊंगा शायद मेरे खाने की कोई चीज आपके पास नहीं है। वह लड़की बोली कि सब कुछ है दाल, रोटी, चावल, सब्जी आदि कुछ भी खा सकते हैं। मैंने कहा कि दाल रोटी और सब्जी ले आओ, जब वह लेने को चली तो मेरे मन में विचार आया कि ये दाल और चावल भी उन्हीं बर्तनों में बनती होगी जिनमें सूअर, मुर्गे, बकरे आदि बनते हैं,मैंने तुरन्त कहा कि मेरे लिये कुछ मत लाओ। एक घन्टे बाद दिल्ली पहुँचकर इच्छा अनुसार भोजन खाऊंगा। वह चली गयी। मेरे बराबर में एक ईसाई और एक मुसलमान बैठे थे, वह मुल्ला बोला कि महाराज जी आप मांस नहीं खाते ? मैंने कहा कि मांस मनुष्यों के खाने की चीज नहीं है यह जानवरों का भोजन है। वह बोला कि महाराज आपके धर्म ग्रन्थों में तो मांस खाने की पूरी छूट है। और आपको तो अपने धर्म ग्रन्थों के अनुसार चलना चाहिए। मैंने उससे पूछा कि किस ग्रन्थ में लिखा है? उसने कहा कि भागवत में और ब्रह्म वैवर्त्त पुराण में लिखा है। और तुम्हारे यहां जो श्राद्ध होते है उनमें ब्राह्मणों को मांस खिलाना लिखा है, और यह भी लिखा कि जो ब्राह्मण मांस परोसा जाने पर उसे न खाये तो उसे भारी पाप लगेगा। मुझे इसका पहले ही पता था क्योंकि ये पुस्तकें तो सन् १९६५ में ही पढ़ ली थी। मैंने उससे कहा कि जिन पुस्तकों में यह लिखा है उनका वैदिक धर्म से कोई लेना देना नहीं हैं वे अनाडियों ने लिखी, कायर देश द्रोही और लालची लोगों ने लिखी हैं। हम आर्य हैं वैदिक धर्मी हैं वैदिक साहित्य में कहीं ऐसा लिखा हो तो मान लूंगा परन्तु आप ऐसा कहीं भी लिखा नहीं दिखा सकते।

वह बोला कि महाराज जी पहले भी कई साधुओं से हमने पूछा तो वे तो कहते हैं, कि पुराण हमारे धर्म ग्रन्थ हैं आप तो उनसे बिल्कुल उल्टा कर रहे हो। मैंने कहा अब तक आपकी बात पौराणिक पाखण्डी साधुओं से हुई है। आर्य संन्यासी से आज पहली बार पाला पड़ा है। वह चुप हो गया। दूसरी ओर जो ईसाई बैठा था उसने कहा कि महाराज जी हमारे लोग तो तुम्हारे पुराणों का बहुत लाभ उठाते हैं, और विशेषकर भागवत पुराण का! मैंने कहा कि बताओ कैसे? वह बोला कि हमारे लोग भारत के गरीब और अनपढ़ लोगों में ईसाई मत का प्रचार करते हैं और नाना प्रकार के प्रलोभन देकर उन्हें ईसाई बनाते हैं जब वे दीक्षा लेते हैं तो गिरजे में मुख्य पादरी का भाषण होता है। और वह अपने भाषण में बाइबिल की कोई बात नहीं कहता वह तो पुराणों की बात करता है। और कृष्ण द्वारा चीर हरण, गोपियों से व्यभिचार आदि की भागवत की अनेकों कथाओं को बड़े रोचक ढंग से सुनाता है, और बाद में कहता है कि देख लो हिन्दुओं के भगवानों की करतूत? इन भगवानों से तो बदमाश भी अच्छे हैं। वे ही हिन्दू जो केवल घन्टाभर पहले राम और कृष्ण को भगवान मानते थे, ऋषि मुनियों का आदर करते थे, वे ही लोग राम और कृष्ण को गाली देने लगते हैं और कहते हैं कि पादरी साहब आपने बहुत अच्छा किया कि उन मूर्खों से निकाल कर हमें ईसा की शरण में ले आए।

मैंने उससे पूंछा कि यह बताओ कि इस प्रकार छल-कपट से या प्रलोभन से हिन्दुओं का ईसाई बनाना आप पुण्य का कार्य मानते हैं ? उसने कहा कि वैसे तो मैं भी ईसाई हूँ, पर मुझे तो यह काम अच्छा नहीं लगता इसीलिए मैंने सारी बात आप को बता दी। पाठकगण इससे समझ सकते हैं कि यह भागवत देश और संस्कृति के लिए कितनी घातक है। आज हर वैदिक धर्मी का कर्तव्य बनता है कि भागवत की पोल खोलकर भोले-भाले लोगों का मार्ग दर्शन करें।

भागवत की रचना का आधार परीक्षत को शुकदेव जी द्वारा भागवत की कथा सुनाने पर रखा गया है, किन्तु शुकदेव जी की मृत्यु उससे बहुत पहले हो चुकी थी। अतः कथा का आधार ही मिथ्या है। भागवत की

श्लोक संख्या अठारह हजार बताई जाती है ऐसा भागवत में भी लिखा है किन्तु वर्तमान में उसमें १४१८० श्लोक मिलते हैं अर्थात् उसमें से प्रायः चार हजार श्लोक निकाल दिये गये हैं। इस प्रकार कटा-छटा होने से भागवत प्रमाणिक पूर्ण ग्रन्थ नहीं है।

इस प्रकार भागवत सर्वथा अप्रमाणिक, वेद विरुद्ध, नवीन कल्पित वैष्णव पंथ का भयंकर भ्रमात्मक ग्रन्थ है। इस पुस्तक में हमने यही सिद्ध करने का प्रयास किया है और इस विषय पर यथा सामर्थ्य प्रकाश डाला है। यह इतनी गन्दी पुस्तक है कि अत्रि स्मृतिकार को भी यह कहना पड़ा।

वेदैर्विहिनाश्च पठन्ति शास्त्रं। शास्त्रेण हीनाश्च पुराण पाठाः।
पुराणहीनाः कृषिणो भवन्ति। भ्रस्टास्ततो भागवता भवन्ति।।

अर्थात् वेदों से जो भ्रष्ट हैं वे उनसे नीचे के ग्रन्थ शास्त्रों को पढ़ते हैं। जो शास्त्रों से भी हीन हैं वे उनसे भी निम्न कोटि के ग्रन्थ पुराणों को पढ़ते हैं जो लोग पुराणों से भी हीन हैं वे उससे निम्न कोटि का कार्य खेती करते हैं। तथा जो लोग इन सबसे भ्रष्ट हैं वे लोग सबसे नीच ग्रन्थ भागवत को वांचते फिरते हैं। अत्रि स्मृतिकार ने भागवत को सबसे नीच कोटि का ग्रन्थ माना है, और लिखा है कि सब कर्मों से भ्रष्ट लोग ही इसे पढ़ते हैं और सत्य मानते है। इससे आगे के श्लोक में स्मृतिकार और भी कठोर व्यवस्था देता है वह लिखता है कि-

ज्योर्तिवदो ह्यर्वाणः कीश पौराण पाठकाः।
श्राद्धे, यज्ञे, महादाने वरणीयाः, कदाचनः। (अत्रि स्मृति३८३)

ज्योतिषी, अथर्ववेदी तथा पुराण पढ़ने वाले (भागवत पढ़ने वाले) इनका यज्ञदान आदि सब कार्यों से बहिष्कार कर देना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि अत्रि स्मृतिकार भागवत को सबसे निम्न कोटि का ग्रन्थ मानते हैं। पूरी भागवत को पढ़कर हम भी इसी परिणाम पर पहुंचे हैं और कोई भी व्यक्ति भागवत को निष्पक्ष भाव से पढ़ेगा तो वह भी इसी परिणाम पर पहुंचेगा जिस पर हम पहुंचे हैं। आशा है कि यह पुस्तक सभी को पसन्द आयेगी। और मानव समाज को सन्मार्ग दर्शन की दृष्टि से इसका पूरा प्रचार किया जायेगा।

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

भागवत क्या है ?

भागवत पुराण के विषय में सुना जाता है कि भागवत की कथा शुकदेव जी ने राजा परीक्षत को सुनाई थी। भागवत के प्रथम स्कन्ध के अठारहवें अध्याय में लिखा है कि राजा परीक्षत धनुष लेकर वन में शिकार खेलने गये हुए थे। हिरन के पीछे-२ दौड़ते-२ वे थक गये और भूख प्यास भी लगी। जब उन्हें कहीं कोई जलाशय नहीं मिला तो एक आश्रम में घुस गये। उन्होंने देखा कि शान्तभाव से एक मुनि आँखें बन्द किये बैठे हैं। राजा परीक्षत ने ऐसी अवस्था में उनसे जल मांगा। जब राजा को वहां बैठने को तिनके का आसन भी न मिला, और किसी ने भूमि पर बैठने को भी न कहा, तब अपने को अपमानित सा मानकर वह क्रोध के वश हो गये। उनके जीवन में यह इस प्रकार का पहला ही अवसर था। उन्होंने क्रोध वश धनुष की नोक से एक मरा सांप उठाकर ऋषि के गले में डाल दिया उनके मन में आया कि यह जो आँखे बन्द किये बैठा है यह ढोंग कर रहा है।

उस शमीक ऋषि का पुत्र बड़ा तेजस्वी था, वह बालकों के साथ पास ही खेल रहा था, जब उसे पता चला कि राजा ने मेरे पिता के साथ दुर्व्यवहार किया है, तो वह क्रोधित हुआ और लाल आँखे करके कहा कि अभी मैं राजा को दण्ड देता हूँ। परीक्षत ने मेरे पिता का अपमान किया है इसलिए मेरी प्रेरणा से आज के सातवें दिन परीक्षत को तक्षक नाग डस लेगा ।

इसके बाद वह बालक आश्रम में गया तो अपने पिता के गले में सांप पड़ा देखा तो बड़ा दुःखी होकर जोर से रोने लगा। इसके रोने की आवाज सुन कर ऋषि ने धीरे-२ आँखें खोली और पुत्र से पूछा कि क्यों रोता है ? तो बालक ने सारा हाल कह दिया। पुत्र की बात सुनकर ऋषि ने अपने पुत्र को फटकारा और कहा कि उसका कोई अपराध नहीं था,तूने इतना बड़ा शाप दे डाला यह अच्छा नहीं किया यदि राजा मर गया तो अराजकता फैल जायेगी वह राजा धर्मात्मा है।

राजधानी में पहुंचकर परीक्षत को अपने निन्दनीय कर्म के लिए बड़ा पश्चाताप हुआ और सोचने लगा कि मुझसे पाप हुआ है। वे नाना प्रकार से चिन्ता कर रहे थे, तभी उन्हें मालूम हुआ कि ऋषि कुमार के शाप से मुझे तक्षक नाग डसेगा। उन्हें यह बहुत अच्छा लगा। उन्होंने सोचा कि मैं बहुत दिनों से संसार में आसक्त हो रहा था, अब शीघ्र वैराग्य होने का कारण मिल गया। इस प्रकार समस्त आसक्तियों का त्याग करके गंगा के तट पर जा बैठे। उस समय गंगा के तट पर उनके पास अनेकों ऋषि-मुनि आये। एक दिन अवधूत वेश में घूमते हुए शुकदेव जी भी आ गये महाराज परीक्षत ने उनका अतिथि सत्कार किया। और शुकदेव जी से अपने कल्याण की बात पूछने लगे कि भगवन् यह बताओ कि मनुष्य को क्या करना चाहिए किसका श्रवण, किसका जप, किसका स्मरण और किसका भजन करना चाहिए तथा किसका त्याग करें। राजा ने जब बड़ी मधुर वाणी से पूछा तो शुखदेव जी उनका उत्तर देने लगे।

परीक्षत! द्वापुर के अन्त में इस भगवत् रूप अथवा वेद तुल्य- श्री मद्भागवत नाम के महापुराण का अपने पिता श्री कृष्णद्वैपायन से मैंने अध्ययन किया था। परीक्षत मेरी निगुर्ण रूप परमात्मा में पूर्ण निष्ठा है फिर भी भगवान श्री कृष्ण की मधुर लीलाओं ने मेरे हृदय को अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। यही कारण है कि मैंने इस पुराण का अध्ययन किया। तुम भगवान के परम भक्त हो इसलिए तुम्हें सुनाता हूँ। जो शुकदेव जी ने परीक्षत को सुनाई थी वही यह भागवत पुराण है। यह बिल्कुल झूट है क्योंकि शुकदेव जी तो परीक्षत के जन्म से भी पहले ही स्वर्गवासी हो चुके थे। यह महाभारत से ही सिद्ध है। इस सम्बन्ध में महाभारत के निम्न प्रमाण दृष्टव्य हैं- महाभारत के युद्ध की समाप्ति के पश्चात् पितामह युद्ध क्षेत्र में शर शय्या पर पड़े थे तब युधिष्ठिर के साथ उनका दीर्घ वार्तालाप हुआ था जो कि शान्तिपर्व में दिया गया है। युधिष्ठिर ने भीष्म से वार्तालाप में प्रश्न किया -पितामह! व्यास जी के यहां महातपस्वी और धर्मात्मा शुकदेव जी का जन्म कैसे हुआ तथा उन्होंने परम सिद्धि कैसे प्राप्त की यह मुझे बताइये, तपस्या के धनी व्यास जी ने किस स्त्री के गर्भ से शुकदेव जी

को उत्पन्न किया हमें उन महात्मा शुकदेव जी की माता का नाम नहीं मालूम है और न हम उनके श्रेष्ठ जन्म का वृतान्त ही जानते हैं। पितामह आप मुझे शुकदेव जी का महात्म्य आत्मयोग और विज्ञान यथार्थ रीति से क्रमशः बतलाइये। इस प्रश्न से ही यह प्रकट है कि शुकदेव जी युधिष्ठिर के समकालीन भी नहीं थे वरना तो उनका सारा वृतान्त जानते होते। शुकदेव जी पाण्डवों के जन्म से पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो चुके होंगे और उनके जीवन की घटनाएं पुरानी पड़ चुकी होगी। इसीलिए युधिष्ठिर को उनके विषय में जानने की आवश्यकता हुई होगी। युधिष्ठिर के प्रश्न के उत्तर में पितामह भीष्म शुकदेव जी के जन्म का हाल बताते हुए कहते हैं कि मार्कण्डेय ऋषि ने जो सुनाया था वही तुम्हें सुनाता हूँ।

शुकदेव जी का जन्म व मृत्यु

मार्कण्डेय के कथन के आधार पर भीष्म ने कहा- व्यास जी ने पुत्र प्राप्ति के लिए शिवजी की घोर आराधना की और शिव ने उन्हें पुत्र प्राप्ति का वरदान दे दिया। महादेव जी से उत्तम वर पाकर एक दिन सत्यवती नन्दन व्यास जी अग्नि प्रकट करने की इच्छा से दो अरणी काष्ठ लेकर उनका मन्थन करने लगे। इसी समय व्यास जी ने वहां आयी हुई घृताची नामक अप्सरा को देखा, जो अपने तेज से परम सुन्दर रूप धारण किये हुई थी। होनहार होकर रहती है इसीलिए व्यास जी घृताची के रूप से आकृष्ट हो गये। अग्नि प्रकट करने की इच्छा से अपने काम के वेग को यत्नपूर्वक रोकते हुए व्यास जी का वीर्य सहसा उस अग्नि काष्ठ पर ही गिर पड़ा। उस समय भी द्विज श्रेष्ठ ब्रह्मर्षि व्यास जी निस्शंक मन से दोनों अरणियों के मन्थन मे लगे रहे उसी समय अरणी से श्री शुकदेव जी प्रकट हो गये। अरणी के साथ-२ शुक का भी मन्थन हो जाने से महा तपस्वी तथा महा योगी शुकदेव जी का जन्म हो गया वे अरणी के गर्भ से पैदा हुए थे। मार्कन्डेय से सुनी कथा के आधार पर इसके बाद भीष्म पितामह ने शुकदेव जी की शिक्षा-दीक्षा और तप आदि का उल्लेख किया और अन्त

में बताया है। कि अपना प्रभाव दिखाकर शुकदेव जी परम धाम मोक्ष को प्राप्त हुए। युधिष्ठिर तुम जिसके विषय में मुझसे पूछ रहे थे वह शुकदेव जी के जन्म और मृत्यु की कथा मैंने तुम्हें विस्तार से सुना दी ।

श्री शुकदेव जी के जन्म का प्रकार जो महाभारत में लिखा है वह सृष्टि क्रम के विपरीत है, यदि इसे सही माना जायेगा तो शुकदेव जी का जन्म व अस्तित्व ही सिद्ध नही हो सकेगा। और न उनके भागवत की कथा कहने की संगति लग सकेगी। हम यह मान लेते हैं कि श्री व्यास जी का किसी घृताची नाम की स्त्री से सम्बन्ध हो गया होगा, और उसके गर्भ से शुकदेव जी पैदा हुए होंगे। क्योंकि व्यास जी के पिता पाराशर जी ने भी मल्लाह की लड़की से नाव पर विषय-भोग करके व्यास जी को पैदा किया था तब यदि उसी प्रकार,बिना विवाह किये किसी स्त्री से व्यास जी ने सम्बन्ध करके शुकदेव जी को पैदा कर दिया हो तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। क्योंकि यह तो उनके कुल की परम्परा हो गयी थी। कुरू, पाण्डु तथा विदुर की उत्पत्ति के लिये भी व्यास जी ही नियुक्त किये गये थे। उस युग में इस प्रकार के सम्बन्ध एवं सन्तानें वैद्य मानी जाती थी।

शुकदेव जी का जन्म व्यास जी की यौवन अवस्था में हुआ होगा। युवा होने पर वे तपस्या करने चले गये थे। बहुत बाद मे व्यास जी ने कुरू, पाण्डु तथा विदुर को जन्म दिया होगा।

जब पाण्डु युवा हुए तब उसका विवाह कुन्ती से हुआ था। पाण्डु संतान उत्पन्न करने के योग्य नहीं थे। अतः कुन्ती ने धर्म नामके ऋषि से नियोग करके युधिष्ठिर, वायु ऋषि से भीमसैन, इन्द्र जी से अर्जुन तथा अश्वनी कुमारों से नियोग करके नकुल और सहदेव को जन्म दिया था। पाण्डवों ने युवा होने अर्थात् २५वर्ष तक शस्त्र विद्या व शिक्षा प्राप्त की होगी, उसके बाद ही राज्य संभाला होगा। कुछ वर्ष तक राज्य करने के बाद युधिष्ठिर ने राज सूर्य यज्ञ किया था। जिसमे जुए में हारकर सारा राज पाट हारा था। हम यह अवधि पांच वर्ष मान लेते है। इसके बाद पाण्डव १२ वर्ष वनवास मे काटते रहे। वनवास से लौटने तक उनकी आयु लगभग बयालीस वर्ष हो जाती है। यहां पर युद्ध होता है और पाण्डव विजयी हो

कर राज्य संभालते हैं। युधिष्ठिर ने ३६ वर्ष ८ महीने और २५ दिन राज्य किया। राज्य त्याग कर स्वर्गारोहन के समय युधिष्ठिर ८० वर्ष के थे। उनके पश्चात् परीक्षत को गद्दी मिली थी। परीक्षत ने साठ वर्ष तक राज्य किया था। इन दोनों राजाओं के राज्यकाल का समय सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें सम्मुलास के अन्त में दिया है।

इस प्रकार युधिष्ठिर के जन्म काल से परीक्षत के मृत्यु काल तक लगभग १४० वर्ष बीत जाते हैं। महाभारत में व्यास जी और पाण्डवों का धनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। यदि शुकदेव जी उस समय होते तो यह असम्भव था कि युधिष्ठिर उसके विषय में जानकारी न रखते। इससे स्पष्ट है कि शुकदेव जी का जन्म तथा मृत्यु परीक्षत की मृत्यु से लगभग १४० वर्ष पहले हो चुकी थी। यह भी जानने योग्य बात है कि भीष्म जी को भी शुकदेव जी की जानकारी नहीं थी। वे कहते है कि मार्कण्डेय जी ने उनको यह कथा सुनाई थी। भीष्म ने १७२ वर्ष की आयु में शरीर त्यागा था। अर्थात् वे युधिष्ठिर से लगभग १०० वर्ष बड़े थे। शुकदेव जी की घटना का उन्हें भी सीधा ज्ञान नहीं था। उससे प्रकट होता है कि भीष्म के जन्म से पूर्व ही शुकदेव जी मर चुके थे। उनके मरने की बात परीक्षत की मृत्यु से लगभग २५० वर्ष पूर्व घट चुकी थी। अथवा भीष्म की आयु १७२ साल +युधिष्ठिर वा परीक्षत का शासनकाल ३६+६०=२६८ वर्ष से पूर्व शुकदेव जी मरे थे। भागवत कार का यह कहना है कि परीक्षत की कुटी पर मुनियों के समागम में सूत की उपस्थिति में व्यास पुत्र निवृत्ति परायण शुकदेव जी ने भागवत सुनाया, यह बिल्कुल झूठ सिद्ध हो जाता है। भागवतकार ने यह विना सिर पैर की झूठी कहानी गढ़ी है कि शुकदेव जी ने भागवत की कथा परीक्षत को सुनाई थी ।

लड़की का लड़का और लड़के की लड़की बनाना।

वैवस्वत मनु सन्तान हीन थे, उन्हे सन्तान प्राप्त करने को महर्षि वशिष्ठ ने उनसे यज्ञ कराया। मनु की पत्नि श्रद्धा ने अपने होता के पास जाकर कहा कि मुझे कन्या ही प्राप्त हो। और यज्ञ के फल स्वरूप पुत्र के स्थान पर इला नाम की कन्या हुई। उसे देखकर महाराज मनु का मन विशेष प्रसन्न नहीं हुआ। उन्होंने अपने गुरू वशिष्ठ से कहा भगवन् आप लोग तो ब्रह्मवादी है आपका कर्म विपरीत फल देने वाला कैसे हो गया। वशिष्ट ने कहा राजन् तुम्हारे होता के विपरीत संकल्प से ही हमारा संकल्प ठीक-ठीक पूरा नहीं हुआ। फिर भी अपने तप के प्रभाव से मैं तुम्हें श्रेष्ठ पुत्र दूंगा ।

परम् यशस्वी भगवान् वशिष्ठ ने ऐसा निश्चय करके इस इला नाम की कन्या को ही पुरूष बना देने के लिए भगवान नारायण की स्तुति की। भगवान ने संतुष्ट होकर उन्हें मुँह मागा वर दिया। जिसके प्रभाव से वह कन्या ही सुधुम्न नामक पुत्र बन गयी।

एक दिन महाराज सुद्युम्न शिकार खेलने के लिए घोड़े पर सवार होकर कुछ मंत्रियों के साथ वन में गयें। वीर सुद्युम्न कवच पहनकर हाथ में सुन्दर धनुष बाण लेकर हरिणों का पीछा करते-करते बहुत आगे बढ़ गये। और मेरू पर्वत की तलहटी में चले गए। वहां शंकर भगवान पार्वती के साथ विहार करते रहते हैं उस वन में प्रवेश करते ही सुद्युम्न ने देखा कि मैं स्त्री बन गया हूँ, और घोड़े की घोड़ी बन गयी। और उनके अनुचर भी सब स्त्री बन गये वे सब उदास होकर एक दूसरे का मुँह देखने लगे।

परीक्षित ने शुकदेव से पूछा कि उस भूखण्ड. में ऐसा गुण कैसे आ गया यह हमें शीघ्र बताने की कृपा करें। शुकदेव जी ने कहा परीक्षत ! एक दिन भगवान् शंकर का दर्शन करने के लिए बड़े-बड़े व्रतधारी ऋषि उस वन में गए। उस समय पार्वती वस्त्र हीन थी उसने जल्दी से शंकर की गोद से उठकर वस्त्र पहन लिए। उसी समय शंकर ने पार्वती को प्रसन्न करने के लिए कहा कि मेरे सिवा जो भी पुरूष इस स्थान में प्रवेश करेगा वही

स्त्री बन जायेगा। हे परीक्षत तभी से पुरूष इस स्थान में प्रवेश नहीं करते। सुद्युम्न स्त्री बन जाने के बाद अपने साथियों को लेकर वन में विचरने लगे। उसी समय शक्तिशाली बुद्ध ने देखा कि मेरे आश्रम के पास ही बहुत स्त्रियों से घिरी हुई एक सुन्दरी विचर रही है। उन्होंने इच्छा की कि यह मुझे मिल जाये। उस सुन्दरी ने भी चाहा कि बुद्ध मेरा पति बन जाये। इस पर बुद्ध ने उस के गर्भ से पुरूरवा नाम का पुत्र उत्पन्न किया। सुनते हैं कि एक दिन वे वशिष्ठ जी पर प्रसन्न हुए। उन्होंने उस की इच्छा पूर्ण करने के लिए कहा कि वशिष्ठ तुम्हारा यह यजमान एक महीने तक पुरूष रहेगा और एक महीने तक स्त्री। राजा सुद्युम्न प्रजा का पालन करने लगे। परन्तु प्रजा उनका अभिनन्दन नहीं करती थी। वृद्धावस्था आने पर सुद्युम्न ने अपने पुत्र को राज्य सोंप दिया और आप जंगल में तप करने चले गये। भागवत महापुराण दूसरा खण्ड अ० १-पृ०१ नवम स्कन्ध ।।

विचित्र मानव उत्पत्ति

श्री शुकदेव जी कहते हैं कि हे परीक्षत! एक बार मनु जी के छींकने पर उनकी नासिका से इक्ष्वाकु नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। इक्ष्वाकु के १०० पुत्र हुए। उनमें सबसे बड़े तीन थे। विकुक्षि, निमि, और दन्डक। एक बार राजा इक्ष्वाकु ने अष्ट का श्राद्ध के समय अपने बड़े बेटे को आज्ञा दी- विकुक्षि शीघ्र जाकर श्राद्ध के योग्य पवित्र पशुओं का मांस लाओ। वीर विकुक्षि वहां से चल कर वन में गये। वहां उसने श्राद्ध के योग्य बहुत से पशुओं का बध किया। वह थक तो गया ही था भूख भी लग आई थी इस लिए यह बात भूल गया कि श्राद्ध के लिए मारे गये पशुओं को स्वयं नहीं खाना चाहिए। उसने एक खरगोश खा लिया। विकुक्षि ने बचा हुआ मांस अपने पिता को ला दिया। इक्ष्वाकु ने अपने गुरु से मांस प्रोक्षण करने को कहा, तब गुरुजी ने बताया कि यह मांस श्राद्ध के योग्य नहीं है। गुरु जी के कहने पर राजा इक्ष्वाकु को अपने गुरु जी की करतूत का पता चल गया। उन्होंने शास्त्रीय विधि का उल्लंघन करने वाले अपने गुरु को देश निकाल दिया।। भाग० पुराण-दूसरा खण्ड अ०६-पृ०२६।।

मान्धाता की उत्पत्ति

एक निकुम्भ नाम के राजा थे उसका पुत्र था वर्हणाश्व उसके सेनाजित उसके युवनाश्व नामक पुत्र हुआ। युवनाश्व सन्तान हीन था, इसलिए वह बहुत दुःखी होकर अपनी सौ स्त्रियों के साथ वन में चला गया। वहां ऋषियों ने बड़ी कृपा करके युवनाश्व से पुत्र प्राप्ति के लिए बड़ी एकाग्रता के साथ इन्द्र देवता का यज्ञ कराया। एक दिन राजा युवनाश्व को रात्रि में बड़ी जोर की प्यास लगीं वह यज्ञशाला में गया परन्तु वहां देखा कि ऋषि लोग सब सो रहे हैं। तब जल मिलने का और कोई उपाय न देख कर उसने वह मंत्र से अमिमंत्रित जल ही पी लिया। परीक्षत ! जब प्रातःकाल ऋषि लोग सोकर उठे, और उन्होंने देखा कि कलश में तो जल ही नहीं है। तब उन लोगों ने पूछा कि किसका काम है यह ? पुत्र उत्पन्न करने वाला जल किसने पी लिया ? अन्त में जब उन्हें मालूम हुआ कि भगवान की प्रेरणा से राजा युवनाश्व ने ही उस जल को पी लिया है तो उन लोगों ने भगवान के चरणों में नमस्कार किया और कहा-धन्य है भगवान का बल ही वास्तव में बल है। इसके बाद प्रसव का समय आने पर युवनाश्व की दाहिनी कोख फाडकर उसके एक चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न हुआ उसे रोते देख ऋषियों ने कहा- यह बालक दूध के लिए बहुत रो रहा है। यह किसका दूध पियेगा। तब इन्द्र ने कहा कि यह मेरा दूध पियेगा । और इन्द्र ने अपनी तर्जनी उंगली मुँह में डाल दी। ब्राह्मण और देवताओं के प्रसाद से उसके पिता युवनाश्व की भी मृत्यु नहीं हुई वह वही तपस्या करके मुक्त हो गया। इस बालक का नाम रखा गया मांधाता। यह चक्रवर्ती सम्राट हुआ।। भागवत पुराण दूसरा खण्ड पृ० -२६ गीताप्रैस गोरख पुर

तपस्वी की करतूत

परम तपस्वी सौभरि मुनि एक बार यमुना जल में डुबकी लगाकर तपस्या कर रहे थे, वहां उन्होंने देखा कि नर मछली मत्सराज अपनी बहुत सी पत्नियों के साथ बहुत सुखी हो रहा है। उसके इस सुख को देख कर

सौभरि के मन में भी विवाह करने की इच्छा उठी। और उन्होंने राजा मांधाता के पास आकर उनकी पचास कन्याओं में से एक कन्या मांगीं राजा ने कहा कि यदि कन्या स्वयंवर में आपको चुन ले तो आप कन्या को ले लेना। सौभरि ऋषि मांधाता का अभिप्राय समझ गये। उन्होंने सोचा कि राजा ने मुझें इसलिए सूखा जबाब दिया है कि अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ। शरीर में झुर्रियां पड़ गई हैं। बाल पक गये हैं, और सिर कांपने लगा है अब कोई स्त्री मुझसे प्रेम नहीं कर सकती अच्छी बात है। मैं अपने को ऐसा सुन्दर बनाऊंगा कि राज कन्याएं तो क्या ,देवागंनाएं भी मेरे लिये लालायित हो जायेगी। ऐसा सोचकर उन्होंने वैसा ही किया ।

फिर क्या था अन्तःपुर के रक्षक ने सौभरि मुनि को कन्याओं के सजे सजाये महल में पहुंचा दिया। फिर तो उन पचासों राज कन्याओं ने एक सौभरि को ही अपना एक पति चुन लिय। उन कन्याओं का मन सौभरि जी में इस प्रकार आसक्त हो गया कि वे उनके लिये आपस के प्रेम भाव को भूल कर परस्पर कलह करने लगीं और एक दूसरे से कहने लगी कि यह तुम्हारे योग्य नहीं है। मेरे योग्य है। सौभरि ने उन पचासों का पाणिग्रहण कर लिया। ।। भागवत पुराण दू०ख० अ०६ पृ०२७ ।।

श्री कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को धारण किया।

इस प्रकार कहकर भगवान श्री कृष्ण ने खेल-खेल में एक ही हाथ से गिरिराज को उखाड लिया और जैसे छोटे२ बालक बरसाती छत्ते के पुष्पों को उखाड हाथ में रख लेते हैं। वैसे ही उन्होनें उस पर्वत को धारण कर लिया। इसके बाद भगवान ने गोपों से कहा-माता जी और ब्रज वासियों। तुम लोग अपनी गौओं और सब सामग्रीयों के साथ इस पर्वत के गड्ढे में आकर आराम से बैठे जाओ। देखो तुम लोग ऐसी शंका मत करना कि यह पर्वत मेरे हाथ से गिर पड़ेगा तुम लोग तनिक भी मत डरो। इस आंधी पानी के डर से तुम्हें बचाने को मैंने यह युक्ति रची है। जब श्री कृष्ण भगवान ने सबको यह आश्वासन दिया। तब सब लोग अपने गाय

बछड़ों को लेकर पर्वत के गढ्डे में आ घुसे। भगवान श्री कृष्ण ने सब व्रजवासियों के देखते-२ भूख प्यास की पीड़ा आराम विश्राम की आवश्यकता आदि सब कुछ भुलाकर सात दिन तक लगातार उस पर्वत को उठाये रखा । वे एक पग भी वहां से इधर-उधर को नहीं हुए। श्री कृष्ण की योगमाया का यह प्रभाव देखकर इन्द्र के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अपना संकल्प पूरा न होने के कारण उसकी सारी हेकडी बन्द हो गयी।

भा०दू०खण्ड अ०२५ पृ २४६।।

शुकदेव जी कहते हैं कि हे परीक्षत! जब भगवान श्री कृष्ण ने गोवर्धन को धारण करके मूसलाधार वर्षा से ब्रज को बचा लिया। तब उनके पास गोलोक से कामधेनू (बधाई देने के लिए) और स्वर्ग से देवराज इन्द्र अपने अपराध को क्षमा कराने के लिए आये। भगवान का तिरस्कार करने के कारण इन्द्र बहुत ही लज्जित थे। इसलिए उन्होंने एकान्त स्थान में भगवान के पास जाकर अपने सूर्य के समान तेजस्वी मुकुट से उनके चरणों का स्पर्श किया। परम तेजस्वी भगवान श्री कृष्ण का प्रभाव देख सुनकर इन्द्र का यह घमंड जाता रहा कि मैं ही तीनों लोकों का स्वामी हूँ।

भा०दू०स्व०अ०२६ पृ० २५४।।

हरिश्चन्द्र सत्यवादी था या मिथ्यावादी

त्रिशंकु के पुत्र थे हरिश्चन्द्र। उनके लिए विश्वामित्र और वशिष्ठ एक दूसरे को शाप देकर पक्षी हो गये और बहुत वर्षों तक लड़ते रहे। हरिश्चन्द्र के कोई संतान न थी। इससे वे बहुत उदास रहा करते थे। नारद के उपदेश से वे वरूण देवता की शरण मे गये और उनसे प्रार्थना की कि हे प्रभो मुझे पुत्र दो। महाराज यदि मेरे वीर पुत्र होगा तो में उसी से आपका यजन करूंगा। पुत्र होते ही वरूण ने आकर कहा- हरिश्चन्द्र तुम्हें पुत्र प्राप्त हो गया अब उसके द्वारा मेरा यज्ञ करो। दस दिन बीतने पर वरूण ने आकर फिर कहा कि अब मेरा यज्ञ करो। हरिश्चन्द्र ने कहा जब आपके यज्ञ पशु के मुंह दांत निकल आयेंगे तब यह यज्ञ के योग्य होगा। दांत उग

आने पर वरूण ने फिर कहा कि अब तो दांत भी निकल आये अब यज्ञ करो। हरिश्चन्द्र ने कहा कि जब इस के दूध के दांत गिर जायेंगे तब यह यज्ञ के योग्य होगा। दूध के दांत गिर जाने पर वरूण ने फिर कहा कि अब मेरा यज्ञ करो हरिश्चन्द्र ने कहा जब इसके दुबारा दांत आ जायेंगे तब यह पशु यज्ञ के योग्य हो जायेंगा। दांतो के दुबारा उग जाने पर वरूण ने फिर कहा अब मेरा यज्ञ करो। हरिश्चन्द्र ने कहा कि वरूण महाराज क्षत्रिय पशु तब यज्ञ के योग्य होगा जब वह कवच धारण करने लगेगा। शुकदेव जी ने कहा कि हे परीक्षत! इस प्रकार राजा हरिश्चन्द्र पुत्र प्रेम से हीला -हावाला करके समय टालते रहे। इस का कारण यह था कि पुत्र प्रेम की फांसी ने उनके हृदय को जकड़ लिया था। वे जो भी समय बताते वरूण जी उसी की प्रतीक्षा करते। जब रोहित को इस बात का पता चला कि पिता जी तो मेरा बलिदान करना चाहते हैं। तब वह अपने प्राणों की रक्षा के लिए हाथ मे धनुष लेकर वन में चला गया।

कुछ दिन के बाद उसे मालूम हुआ कि वरूण देवता ने रूष्ठ होकर मेरे पिता पर आक्रमण कर दिया जिसके कारण वे महोदर रोग से पीडित हो रहे हैं। तब रोहित अपने नगर की ओर को चल पड़ा। परन्तु इन्द्र ने आकर उसे रोक दिया। उन्होंने कहा कि बेटा रोहित यज्ञ पशु बनकर मरने की अपेक्षा तो पवित्र तीर्थ और क्षेत्रों का सेवन करते हुए पृथिवी पर विचरना ही उत्तम है। इन्द्र की बात को मानकर वह एक वर्ष तक वन में ही रहा इसी प्रकार दूसरे, तीसरे, चौथे और पांचवें वर्ष भी रोहित ने अपने पिता के पास जाने का विचार किया परन्तु ब्राह्मण का वेश धारण कर हर बार इन्द्र आते और उसे रोक देते। इस प्रकार छः वर्ष तक रोहित वन में ही रहा। सातवें वर्ष जब वह अपने नगर को लौटने लगा, तब उसने अजीगर्त नाम के व्यक्ति से उसके मझले पुत्र शुनःशेप को मोल ले लिया और उसे यज्ञ पशु बनाने के लिए अपने पिता को सौंप कर उनके चरणों में नमस्कार किया। तब परम यशस्वी और श्रेष्ठ चरित्र वाले राजा हरिश्चन्द्र ने महोदर रोग से छूठ पुरूष मेघ यज्ञ द्वारा वरूण आदि देवताओं का यजन किया। उस यज्ञ में विश्वामित्र जी होता हुए। परम संयमी

जमदग्नि ने अध्वर्यु का काम किया। वशिष्ठ जी ब्रह्मा बने और अयास्य मुनि सामगान करने वाले उद्गाता बने उस समय इन्द्र ने प्रसन्न होकर हरिश्चन्द्र को एक सोने का रथ दिया था।

भा० खण्ड-२ स्कन्ध ९ अ० ७ पृ० २९।।

राजा सगर की उत्पत्ति

शुकदेव जी कहते हैं कि रोहित का पुत्र हरित हुआ और हरित के वंश में वाहुक हुए। बुढ़ापे के कारण तब वाहुक की मृत्यु हो गयी तो उनकी पत्नी ने उनके साथ सती होना चाहा। ऋषि और्व को इस बात का पता था कि रानी गर्भ से है इसलिए उसे ऋषि ने सती होने से रोक दिया। तब उसकी सौतों को इस बात का पता चला तो उन्होंने उसे भोजन के साथ गर (विष) दे दिया परन्तु गर्भ पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बल्कि उस विष को लिए हुए ही एक बालक का जन्म हुआ। जो गर के साथ पैदा होने से सगर कहलाया। सगर बड़े यशस्वी राजा हुए। सगर चक्रवर्ती सम्राट् थे उन्हीं के पुत्रों ने पृथ्वी को खोदकर समुद्र बना दिया था। सगर ने अश्वमेध यज्ञ में जो घोड़ा छोड़ा था उसे इन्द्र ने चुरा लिया। घोड़े की तलाश में सगर के पुत्रों ने सारी पृथ्वी छान डाली। जब उन्हें कहीं घोड़ा दिखाई दिया। घोड़े को देखकर वे साठ हजार राजकुमार कपिल मुनि की ओर दोड़ पड़े। वे चिल्लाकर कह रहे थे इसे मारो इसने हमारा घोड़ा चुराया है। तब कपिल ने अपनी आंखें खोली। उन सभी राजकुमारों के शरीर में आग जल उठी और वे सब वहीं जलकर भस्म हो गये। सगर की दूसरी पत्नी का नाम केशनी था उसके गर्भ से असमंजस नाम का पुत्र हुआ था।असमंजस के पुत्र का नाम था अशुंमान। वह अपने दादा सगर की आज्ञाओं के पालन और उनकी सेवा में लगा रहता था असमंजस पहले जन्म के योगी थे। कुसंग के कारण वे योग से विचलित हो गए थे। परन्तु अब भी उन्हें पूर्व जन्म का स्मरण बना हुआ था इसलिए वे ऐसा काम किया करते थे जिससे बन्धु- बांधव उन्हें प्रिय न समझें। वे कभी-कभी तो अत्यन्त निन्दित कर्म कर बैठते और अपने को पागल सा दिखलाते। यहां

तक कि खेलते हुए बच्चों को सरयू में डाल देते। इस प्रकार उन्होंने लोगों को अत्यन्त दुःखी कर दिया। अन्त में उनकी ऐसी करतूत देखकर पिता ने पुत्र मोह को छोड़ दिया। इसके पश्चात् असमंजस ने अपने योग बल से उन सब बालकों को जीवित कर दिया और अपने पिता को दिखाकर वे वन में चले गये। अयोध्या के नागरिकों ने जब देखा कि हमारे बालक तो फिर लौट आये तब उन्हें असीम आश्चर्य हुआ और राजा सगर को भी बड़ा पश्चाताप हुआ। भा० पु० दू० खं० अ०८ पृ० ३४।।

राम का तेरह हजार वर्षों का यजन

बाल्मीकि जी के आश्रम में सीता जा ने लव और कुश दो बच्चों को जन्म दिया। सीता जी दोनों बच्चों को बाल्मीकि मुनि को सौंपकर पृथ्वी देवी के लोक में चली गयी। यह समाचार सुनकर राम शोकावेश को न रोक सके। इसके बाद भगवान श्री राम ने ब्रह्मचर्य धारण करके तेरह हजार वर्ष तक अखण्ड रूप से अग्नि होत्र किया। तदनन्तर अपने स्मरण करने वाले भक्तों के हृदय में अपने चरण कमलों को स्थापित करके अपने स्वयं प्रकाश परम ज्योतिर्मय धाम में चले गये।

भा० पु० दू० खं० अ० ११-पृ० ४६।।

भारद्वाज की उत्पत्ति

शुकदेव जी ने कहा कि हे परीक्षत विदर्भराज की तीन कन्याएं सम्राट भरत को व्याही थी वे उनका बड़ा आदर भी करते थे। परन्तु जब भरत ने उनसे कहा कि तुम्हारें पुत्र मेरे अनुरूप नहीं हैं तब वे डर गयी कि सम्राट हमें त्याग न दे इसलिए उन्होंने अपने बच्चों को मार डाला। इस कारण भरत का वंश नष्ट होने लगा। भरत ने सन्तान के लिए यज्ञ किया तब मरूदगणों ने प्रसन्न होकर उन्हें भारद्वाज नाम का पुत्र दिया। भारद्वाज की उत्पत्ति का प्रसंग यह है कि एक बार बृहस्पति जी ने अपने भाई

उतथ्य की गर्भवती पत्नी से मैथुन करना चाहा उस समय गर्भ में (दीर्घ तमा) जो बालक था उसने मना किया। परन्तु बृहस्पति ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। और उसे कहा कि तू अन्धा हो जा यह शाप देकर बलपूर्वक गर्भाधान कर दिया। उतथ्य की पत्नी इस बात से डर गयी कि मेरे पति मेरा त्याग न कर दें। इसलिए उसने बृहस्पति के द्वारा पैदा होने वाले बच्चे को त्यागना चाहा। परन्तु तभी बृहस्पति जी कहते हैं अरी मूढ़ यह मेरा औरस और मेरे भाई का क्षेत्रज इस प्रकार दोनों का पुत्र (द्वाजा) है इसलिए तू डर मत। इस का भरण-पोषण कर। इस पर ममता ने कहा बृहस्पति यह मेरे पति का नहीं हम दोनों का ही पुत्र है इसलिए तुम ही इसका पालन-पोषण करो। इस प्रकार आपस में विवाद करते हुए दोनों ही उसे छोड़कर चले गये। इसलिए इस लड़के का नाम भारद्वाज हुआ।

जरासन्ध की उत्पत्ति

राजा बृहदरथ की पत्नी के गर्भ से एक शरीर के दो टुकड़े उत्पन्न हुए। उन्हें माता ने बाहर फेंकवा दिये। तब जरा नाम की राक्षसी ने जियो-जियो इस प्रकार कहकर खेल-खेल में उन दोनों टुकड़ों को जोड़ दिया। उसी जोड़े हुए बालक का नाम हुआ जरासन्ध।

विचित्र योगी

महाराज चित्ररथ का पुत्र था शशबिन्दू। वह परम योगी महान भोगैश्वर्य सम्पन्न और अत्यन्त पराक्रमी था। शशबिन्दू के दस हजार पत्नियां थी उनमें प्रत्येक पत्नि से एक लाख सन्तान हुई थी। इस प्रकार उसके सौ करोड़ (एक अरब) सन्तान हुई।

पूतना का शरीर

पूतना के शरीर ने गिरते गिरते भी छः कोस के भीतर के वृक्षों को

कुचल डाला। पूतना का शरीर बड़ा भयानक था उसका मुँह हल के समान तीखी दाढ़ों से युक्त था। उसके नथुने पहाड़ों की गुफा के समान गहरे थे और स्तन पर्वत से गिरी हुई चट्टानों के समान थे। आँखे अन्धे कुए के समान गहरी, नितम्ब नदी के करार की तरह गहरे उसकी जांघे नदी के पुल के समान और पेट सूखे हुए सरोवर की तरह लगता था। उसे देखकर सब लोग डर गये। परन्तु कृष्ण को उस की छाती पर बैठा देखकर सबका भय समाप्त हो गया। और गोपियों ने कृष्ण को उठा लिया।

ब्रज की कुमारियों का चीर हरण

शुकदेव जी ने कहा हे परीक्षत! हेमन्त ऋतु के आने पर ब्रज की कुमारियां कात्यायनी देवी की पूजा और व्रत करने लगीं। वे कुमारी कन्याएं पूर्व दिशा का क्षितिज लाल होते-२ यमुना जल में स्नान कर लेती थी और तट पर ही देवी की वालुकामयी मूर्ति बनाकर उनकी पूजा करती। और साथ-२ कहती जाती कि देवी माता श्री कृष्ण को हमारा पति बना दो। हम आपके चरणों में नमस्कार करती हैं। जिन कुमारियों का मन कृष्ण पर न्यौछावर हो चुका था वे एक महीने तक भद्रकाली की पूजा इस संकल्प के साथ करती रही कि कृष्ण ही हमारे पति हो प्रतिदिन प्रातःकाल ही एक दूसरी को नाम लेकर पुकार लेती थी और परस्पर हाथ में हाथ डालकर ऊंचे स्वर से कृष्ण के नामों का गान करती हुई यमुना जल में स्नान करने के लिये जाती थीं। एक दिन सब कुमारियों ने प्रतिदिन की भांति यमुना जी के तट पर जाकर अपने वस्त्र उतार दिये और भगवान श्री कृष्ण के गुणों का गान करती हुई बड़े आनन्द से जल क्रीडा करने लगी। श्री कृष्ण से गोपियों की अभिलाषा छिपी न रही। वे उनका अभिप्राय जानकर अपने सखा ग्वाल वालों के साथ उन कुमारियों की साधना सफल करने के लिए यमुना तट पर गये। उन्होंने अकेले ही उन गोपियों के सारे वस्त्र उठा लिये और बडी फुर्ती से वे वृक्ष पर चढ़ गये। साथी ग्वाल वाल ठठा ठठाकर हंसने लगे और स्वयं श्री कृष्ण भी हंसते हुए गोपियों से हंसी की बात कहने

लगे। अरी कुमारियों इच्छा हो तो यहां आकर अपने वस्त्र ले जाओ। मैं तुमसे सच कहता हूँ हंसी विल्कुल नहीं करता। तुम लोग व्रत करते-२ दुबली हो गयी हो। ये मेरे सखा ग्वाल बाल जानते हैं कि मैंने कभी कोई झूठी बात नहीं कही। सुन्दरियों तुम्हारी इच्छा हो तो अलग-अलग आकर अपने वस्त्र ले लो या सब एक साथ ही आओ मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

भगवान की यह हंसी मसखरी देखकर गोपियों का हृदय प्रेम से सराबोर हो गया। वे तनिक सकुचा कर एक दूसरी की ओर देखने और मुस्काने लगीं। जल से बाहर नहीं निकलीं। जब भगवान ने हंसी-हंसी में यह बात कही तब उनके विनोद से कुमारियों का मन और भी उनकी ओर खिच गया। वे ठण्डे पानी में कंठ तक डूबी हुई थी। और उनका शरीर थर-थर कांप रहा था। उन्होंनें कृष्ण से कहा प्यारे श्रीकृष्ण तुम ऐसी अनीति मत करो। हम जानती हैं तुम नन्द बाबा के लाडले लाल हो। हमारे प्यारे हो। सारे वृजवासी तुम्हारी सराहना करते रहते हैं। देखो हम जाड़े के मारे ठिठुर रही हैं। तुम हमें वस्त्र दे दो। प्यारे श्यामसुन्दर हम तुम्हारी दासी हैं। तुम जो कुछ कहोगे हम उसे करने को तैयार हैं। तुम तो धर्म का मर्म भली प्रकार जानते हो। हमें कष्ट मत दो। हमें वस्त्र दे दो। नहीं तो हम जाकर नन्दबाबा से कह देंगी।

भगवान श्री कृष्ण ने कहा - कुमारियों ! तुम्हारी मुस्कान पवित्रता और प्रेम से भरी है देखो जब तुम अपने को मेरी दासी स्वीकार करती हो और मेरी आज्ञा का पालन करना चाहती हो तो यहां आकर अपने-अपने वस्त्र ले लो। हे परीक्षत ! वे कुमारियां ठन्ड से कांप रही थीं। भगवान की ऐसी बात सुनकर वे अपने दोनों हाथों से गुप्तागों को छिपा कर यमुना जी से बाहर निकलीं। उस समय उन्हें ठन्ड बहुत सता रही थीं। उनके अपने पास आयी देख कर उन्होंने गोपियों के वस्त्र अपने कन्धे पर रख लिए और बड़ी प्रसन्नता से मुस्कराते हुए बोले- अरी गोपियों तुम ने जो व्रत लिया था उसे अच्छी तरह निभाया है इसमें सन्देह नहीं है। परन्तु इस अवस्था में वस्त्र हीन होकर तुमनें जल में स्नान किया है इससे तो जल के

अधिष्ठाता वरूण देव और यमुना जी का अपराध हुआ है। अब इस अपराध की निवृत्ति के लिए अपने हाथ जोड़ कर सिर से लगाओ। और उन्हें झुक कर प्रणाम करो। फिर अपने वस्त्र ले जाओ। गोपियों ने कृष्ण की आज्ञा का पालन किया। और कृष्ण ने उनके वस्त्र दे दिये।

भा० खण्ड-२ स्कन्ध १०-अ० २० पृ० २२६।।

रास लीला

एक गोपी नृत्य करते-करते थक गई उसकी कलाईयों से कंगन और चोटियों से वेला के फूल खिसकने लगे। तब उसने अपनी बगल में ही खड़े मुरली मनोहर भगवान कृष्ण के कन्धे को अपनी बाहों से कसकर पकड़ लिया। भगवान कृष्ण ने अपना एक हाथ दूसरी गोपी के कन्धे पर रख रखा था। वह स्वभाव से तो कमल के समान सुगन्ध से युक्त था ही उस पर बड़े सुगन्धित चन्दन का लेप भी था। उसकी सुगन्ध से वह गोपी पुलकित हो गई उसका रोम-रोम खिल उठा। उसने झट से उसे चूम लिया। एक गोपी नृत्य कर रही थी, नाच के कारण उसके कुण्डल हिल रहे थे उनकी छटा से उसके कपोल और भी चमक रहे थे। उसने अपने कपोल को भगवान कृष्ण के कपोल से सटा दिया और भगवान ने अपना चवाया हुआ पान उसके मुँह में दे दिया। कोई गोपी नूपुर और करधनी के घुंघरूओं को झनकारती हुई नाच रही और गा रही थी। वह जब बहुत थक गई तब अपने बगल में खड़े श्याम सुन्दर के शीतल कर कमल को अपने दोनों स्त्नों पर रख लिया। ।। भा०खण्ड-२ स्कन्ध १० अ०३३ पृ० २७६।।

•

अजगर के शरीर से पुरुष का निकलना

अम्बिका वन में एक बड़ा भारी अजगर रहता था उस दिन वह भूखा भी बहुत था। दैव वश वह इधर ही आ निकला आकर सोये हुये नन्दबाबा को पकड़ लिया। अजगर के पकड़ने पर नन्दराय जी चिल्लाने लगे

बेटा कृष्ण दौड़ों यह अजगर मुझें निगल रहा है। मैं तुम्हारी शरण में हूँ मुझें इस संकट से बचाओं। नन्दबाबा का चिल्लाना सुन कर सब गोप एकाएक उठ खड़े हुये और उन्हें अजगर के मुँह में देख घबरा गये। और लाठियों से अजगर को मारने लगे। परन्तु अजगर ने नन्द बाबा को नहीं छोड़ा। तभी भगवान कृष्ण ने अजगर को पैर से छू दिया। भगवान के पैरों का स्पर्श होते ही सारे अशुभ कर्मों का नाश हो गया। और वह उसी समय अजगर का शरीर छोड़ कर सर्वांग सुन्दर रूपवान मनुष्य बन गया। उस पुरुष के शरीर से दिव्य ज्योति निकल रही थी वह सोने के हार पहने हुए था। भा० खण्ड-२अ० ३४ स्कन्ध १०- पृ० २६१।।

कुब्जा से समागम

श्री कृष्ण अपनों से मिलने की इच्छा रख कर व्याकुल हुई कुब्जा का प्रिय करने-उसे सुख देने की इच्छा से उसके घर गये। कुब्जा तामूल और सुधासव आदि से अपने घर को खूब सजा कर लीला मयि लजीली मुस्कान तथा हावभाव से भगवान की ओर देखती हुई उनके पास आई। कुब्जा नवीन मिलन के संकोच से ही कुछ झिझक रही थी तब श्याम सुन्दर श्रीकृष्ण ने उसे अपने पास बुला लिया और उसकी कंगन से सुशोभित कलाई पकड़ कर अपने पास बैठा लिया और उसके साथ क्रीडा करने लगे। कुब्जा ने इस जन्म में भगवान को अंगराग अर्पित किया था। उसी एक शुभ कार्य के फल स्वरूप उसे ऐसा अवसर मिला। कुब्जा भगवान कृष्ण के चरणों को काम संतप्त हृदय वक्षस्थल और नेत्रों पर रख कर उनकी दिव्य सुगन्ध लेने लगी। और इस प्रकार उसने अपने हृदय की सारी आधी-व्याधि शान्त कर ली।

भा० खण्ड-२ अ०४८ स्कन्ध १०- पृ० ३६५।।

बुआ की लड़की से कृष्ण का विवाह

उज्जैन के राजा थे विन्द और अनुविन्द । वे दुर्योधन के वंशवर्ती तथा अनुयायी थे उनकी बहन मित्रविन्दा ने स्वयंवर में भगवान कृष्ण को अपना पति बनाना चाहा। परन्तु विन्द और अनुविन्द ने अपनी बहन को रोक दिया। मित्रविन्दा श्री कृष्ण की बुआ राजधिदेवी की कन्या थी। भगवान श्रीकृष्ण राजाओं की भरी सभा से उसे बल पूर्वक हर कर ले गये। अपना सा मुँह लिये सब लोग देखते रह गये।

भा० दू० खण्ड अ०४८ पृ० ४२०।।

सत्या से कृष्ण का विवाह

परीक्षत कौशल देश के राजा थे नग्नजित। वे अत्यन्त धार्मिक थे। उनकी परम सुन्दरी कन्या का नाम था सत्या। नग्नजित की पुत्री होने से वह नाग्नजिती कहलाती थी। राजा की प्रतिज्ञा के अनुसार सात दुर्दान्त वैलों पर कोई काबू न पा सका । इसी कारण कोई राजा सत्या से विवाह न कर सका। उनके सींग बड़े तीखे थे और वे बैल किसी पुरुष की गन्ध भी सहन न कर सकते थे। जब भगवान कृष्ण ने यह समाचार सुना जो पुरुष उन बैलों को जीत लेगा उसे ही सत्या प्राप्त होगी। तब वे बहुत बड़ी सेना लेकर कौशल पुरी पहुंचे। कौशल नरेश महाराज नग्नजित ने प्रसन्न हो कर उनकी अगवानी की। और उनका खूब सत्कार किया। राजा नग्नजित की कन्या सत्या ने देखा कि चिर अभिलषित रमा रमण भगवान श्री कृष्ण यहां पधारे हैं। तब उसने मन ही मन यह अभिलाषा की कि यदि मैने व्रत नियम आदि का पालन करके इन्हीं का चिन्तन किया है तो वे ही मेरे पति हों। और मेरी विशुद्ध लालसा को पूर्ण करें। सत्या मन ही मन सोचने लगीं। भगवान मेरे किस नियम या व्रत से प्रसन्न होंगे वे तो केवल अपनी कृपा से ही प्रसन्न हो सकते हैं। भगवान कृष्ण ने कहा कि महाराज मैं आप से कुछ नहीं मांगता बस मैं आपकी कन्या चाहता हूं। नग्नजित ने

कहा कि मेरी कन्या के लिये आपसे अच्छा वर और कौन मिलेगा आप सब गुणों के धाम हैं। परन्तु हमने पहले ही इस विषय में एक प्रण कर लिया है। कन्या के लिए कौन सा वर उपयुक्त है। उसका बल पौरुष कैसा है इत्यादि बातों को जानने के लिए ही हमने ऐसा किया है। हमारे ये सातों बैल किसी के वश में न आने वाले और बिना सधाये हुए हैं। इन्होंने बहुत से राजकुमारों को खण्डित करके उत्साह को तोड़ दिया है। कृष्ण यदि इन्हें आप नाथ लें, अपने वश में करलें तो हमारी कन्या के लिए आप ही अभीष्ट वर होंगे ।भगवान श्रीकृष्ण ने राजा नग्नजित का ऐसा प्रण सुनकर कमर में फेंट कस ली, और अपने सात रूप बनाकर खेल -२ में ही उन बैलों को नाथ लिया। इससे बैलों का घंमड चूर हो गया और उनका बल पौरुष भी जाता रहा। अब भगवान श्री कृष्ण उन्हें रस्सी से बांध कर इस प्रकार खींचने लगे, जैसे खेलते समय नन्हा सा बालक काठ के बैलों को खींचता है। राजा नग्नजित को बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने प्रसन्न होकर भगवान श्रीकृष्ण को अपनी कन्या का दान कर दिया। और सर्व शक्तिमान भगवान श्री कृष्ण ने भी सत्या का पाणिग्रहण किया। राजा नग्नजित ने दस हजार गौएं और तीन हजार ऐसी नवयुवतियां जो सुन्दर वस्त्र तथा गले में स्वर्णहार पहने हुए थी दहेज में दीं। इसके साथ ही नौ हजार हाथी, नौ लाख रथ,नौ करोड़ घोड़े और नौ अरब सेवक भी दहेज में दियें। कौशल नरेश राजा नग्नजित ने बहुत बड़ी सेना के साथ विदा किया ।

भा० दू० खण्ड अ०४८ पृ० ४२०।।

श्री कृष्ण का एक और बुआ की लड़की से विवाह

परीक्षत ! भगवान श्रीकृष्ण की बुआ श्रुतिकीर्ति केकय देश में व्याही थी उनकी कन्या का नाम था भद्रा। उसके भाई सन्तर्दन आदि ने उसे स्वयं ही भगवान श्रीकृष्ण को दे दिया था और उन्होंने उसका पाणि ग्रहण किया। मद्र प्रदेश के राजा की कन्या थी लक्ष्मणा वह अत्यन्त सुलक्षणा थी। जैसे गरूण ने स्वर्ग से अमृत का हरण किया था वैसे ही भगवान श्री कृष्ण ने स्वयंवर में अकेले ही उसे हर लिया।

।। भा० दू० ख पृ० ४२२।।

सोलह हजार एक सौ राज कन्याओं के साथ भगवान का विवाह

प्राग्ज्योतिषपुर के राजा भौमासुर राक्षस को मार कर जब उसके महल में प्रवेश किया तो वहां जाकर भगवान ने देखा कि भौमासुर ने बल पूर्वक राजाओं से सौलह हजार एक सौ कन्याओं को छीन कर अपने यहां रखीं थीं। जब उन राजकुमारियों ने अन्तपुर में पधारे हुए नर श्रेष्ठ भगवान श्री कृष्ण को देखा तब वे मोहित हो गई और उन्होंने उनकी कृपा से अपना सौभाग्य समझ कर मन ही मन अपने परम प्रियतम पति के रूप में वरण कर लिया। उन राजकुमारियों में से प्रत्येक ने अलग-अलग अपने मन में यही निश्चय किया कि यह कृष्ण ही मेरे पति हों। और विधाता मेरी इस अभिलाषा को पूर्ण करे। इस प्रकार प्रेमभाव से उन्होंने अपना हृदय श्री कृष्ण को निछावर कर दिया। तब भगवान श्री कृष्ण ने उन राजकुमारियों को सुन्दर-२ वस्त्र आभूषण पहनाकर पालकियों में बैठाकर द्वारका भेज दिया। और उनके साथ ही बहुत से खजाने, रथ घोड़े तथा अतुल सम्पत्ति भेज दी । ऐरावत के वंश में उत्पन्न हुए अत्यन्त वेगवान चार-चार दांतों वालेसफेद रंग के चौसठ हाथी भी भगवान ने द्वारका भेजे। भगवानश्री कृष्ण ने एक ही मुहूर्त्त में अलग-अलग रूप धारण करके एक ही साथ सब राजकुमारियों का शास्त्रोक्त विधि से पाणिग्रहण किया ।

भागवत -पुराण दूसरा खण्ड अ० ५८पृ०४२० से ४२३ तक ।।

अश्मक की उत्पत्ति

बारह वर्ष बीतने पर राजा सौदास शाप से मुक्त हो गये। जब सहवास के लिए अपनी पत्नी के पास गये, तब उसने इन्हें रोक दिया। क्योंकि उसे उस ब्राह्मणी के शाप का पता था। इसके बाद उन्होंने स्त्री सुख का बिल्कुल परित्याग ही कर दिया। इस प्रकार अपने कर्म के फल स्वरूप वे सन्तान हीन हो गये। तब वशिष्ठ जी ने उनके कहने से मदयन्ती को गर्भाधान कराया। मदयन्ती सात वर्ष तक गर्भ धारण किये रही, परन्तु बच्चा पैदा नहीं हुआ। तब वशिष्ठजी ने उसके पेट पर पत्थर से आघात

किया। इससे जो बच्चा पैदा हुआ वह अश्म (पत्थर) की चोट से पैदा होने के कारण अश्मक कहलाया। अश्मक से मूलक का जन्म हुआ। जब परशुराम जी पृथ्वी को क्षत्रियों से खाली कर रहे थे तब स्त्रियों ने उसे छिपाकर रख लिया था इसी से उसका एक नाम नारी कवच भी हुआ। उसे मूलक इसलिए कहते हैं कि वह पृथ्वी के क्षत्रिय विहीन हो जाने पर उस वंश का मूल प्रवर्तक बना। ।। भा० दू० खं० अ० ६ पृ० ३६।।

परशुराम की करतूत

एक दिन की बात है परशुराम जी की माता रेणुका गंगा तट पर गयी हुई थी। वहां उन्होंने देखा कि गन्धर्वराज चित्ररथ कमलों की माला पहनें अप्सराओं के साथ विहार कर रहा है। वे जल लाने के लिए गंगा तट पर गयी थी। परन्तु वहां जलक्रीड़ा करते हुए गन्धर्व को देखने के लगी और पति देव के हवन का समय हो गया है इस बात को भूल गयी। उनका मन कुछ-कुछ चित्ररथ की ओर खिच भी गया था। हवन का समय बीत गया, यह जानकर वह महर्षि के शाप से भयभीत हो गयी और तुरन्त वहां से आश्रम पर चली आयी। वहां जल का कलश महर्षि के सामने रखकर हाथ जोड़कर खड़ी हो गयी। जमदग्नि मुनि ने अपनी पत्नि के मानसिक व्यभिचार को जान लिया। और क्रोध करके कहा- मेरे पुत्रों! इस पापिनी को मार डालो परन्तु उनके किसी भी पुत्र ने उनकी वह आज्ञा स्वीकार नहीं की। इसके बाद पिता की आज्ञा से परशुराम ने माता के साथ सब भाइयों को भी मार डाला इसका कारण था कि वह अपने पिता के योग बल को और तपस्या के प्रभाव को जानता था। परशुराम जी के इस काम से जमदग्नि बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा-बेटा तुम्हारी जो इच्छा हो वर मांग लो। परशुराम ने कहा पिता जी मेरी माता और सब भाई जीवित हो जायें तथा उन्हें इस बात की याद न रहे कि मैंने उन्हें मारा था।

परशुराम जी के ऐसा कहते ही जैसे कोई सोकर उठे, सब के सब अनायास ही सकुशल उठ बैठे। परशुराम जी ने अपने पिता का तपोबल जानकर ही तो अपने भाइयों और माता का वध किया था।

परीक्षत ! एक दिन की बात है परशुराम जी अपने भाइयों के साथ आश्रम से बाहर वन की ओर गये हुए थे। यह अवसर पाकर वैर साधने के लिए सहस्त्र बाहु के लड़के वहां आ पहुंचे। और उसी समय महर्षि जमदग्नि को मार डाला। उनकी माता परशुराम को पुकारने लगी आवाज सुनकर परशुराम वहां आये और पिता को मरा देखकर अत्यन्त दुःखी हुए। और हाथ में परसा लेकर क्षत्रियों का संहार करने का निश्चय किया परशुराम ने महिष्यमती नगरी के बीचों-बीच सहस्र बाहु अर्जुन के पुत्रों के सिर काटकर एक पर्वत सा खड़ा कर दिया। उनके रक्त से एक बड़ी भारी नदी बह निकली जिसे देखकर ब्राह्मण द्रोहियों के हृदय कांप उठे। भगवान ने देखा कि वर्तमान क्षत्रिय अत्याचारी हो गये हैं। इसलिए राजन् उन्होंने अपने पिता को निमित्त बनाकर इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन कर दिया। और कुरूक्षेत्र के समन्त पंचक में ऐसे-ऐसे पांच तालाब बना दिये जो रक्त के जल से भरे हुए थे।

भा० अ० १६ दू० खं० पृ० ६५ से ६७।।

अलर्क की ६६००० वर्ष की आयु

शुकदेव जी कहते हैं हे परीक्षत ! भीमरथ राजा का पुत्र दिवोदास था और दिवोदास का द्युमान जिसका एक नाम प्रतदग्न भी था। द्युमान के ही पुत्र अलर्क आदि हुए हैं परीक्षत! अलर्क के अलाबा और किसी ने ६६००० वर्ष तक युवा रहकर पृथ्वी का राज्य नहीं भोगा।

भा० दु० खं० अ० १७ पृ० ६८।।

कृष्ण के चमत्कार

तृणावर्त्त नाम का एक दैत्य था। वह कंस का निजी सेवक था। कंस की प्रेरणा से वह गोकुल में आया और बैठे हुए बालक श्री कृष्ण को उडाकर आकाश में ले गया। उसने ब्रजरज से सारे गोकुल को ढ़क दिया

और लोगों की देखने की शक्ति हर ली। यशोदा जी ने वहां अपने पुत्र को देखा तो वह वहां नहीं था। यशोदा को बड़ा शोक हुआ। और वे दुःखी होकर विलाप करने लगी इधर तृणावर्त्त भगवान श्री कृष्ण को आकाश में उडा ले गया तब उनके बोझ को न संभाल सकने के कारण उसका वेग शान्त हो गया और अधिक न चल सका।

एक दिन की बात है यशोदा जी अपने प्यारे शिशु को अपनी गोद में लेकर स्तनपान करा रही थीं वे वात्सल्य स्नेह से इतनी सरावोर हो रही थी कि उनके स्तनों से अपने आप ही दूध झरता जा रहा था। जब वे दूध पी चुके और माता यशोदा उनके रूचिर मुस्कान से युक्त मुख को चूम रही थीं उसी समय कृष्ण को जम्भाई आ गयी। और माता ने उके मुख में देखा। आकाश,अन्तरिक्ष,ज्योतिर्मडल,दिशाएं,सूर्य,चन्द्रमा,,अग्नि,वायु,समुद्र दीप पर्वत नदियां बन और समस्त चराचर प्राणी स्थित हैं। परीक्षत! अपने पुत्र के मुँह में इस प्रकार सहसा सारा जगत देखकर मृगशावक नयनी यशोदा जी का शरीर कांप उठा। उन्होंने अपनी आँखे बन्द कर ली। वे आश्चर्य चकित हो गयी।

।। भा० दशनस्कन्ध अ०६ पृ० १४४-१५४।।

जब माता यशोदा अपने नटखट लडके को रस्सी से बांधने लगी तब वह रस्सी दो अगुंल छोटी पड गयी तब उन्होंने दूसरी रस्सी लाकर उसमें जोडी। जब वह भी छोटी पड़ गयी तब उसमें और जोड़ी इस प्रकार वे ज्यों-ज्यों रस्सी लाती गयी वे सब दो-दो अगुंल छोटी पड़ती गयी। यशोदा ने घर की सारी रस्सी जोड डाली फिर भी वे भगवान कृष्ण को न वांध सकी। उनकी असफलता पर देखने वाली गोपियां मुस्कराने लगी। और वे स्वयं भी मुस्कराती हुई आश्चर्य चकित हो गयी। भगवान कृष्ण ने देखा कि मेरी मां का शरीर पसीने से लथपथ होगया है, चोटी में गुंथी हुई मालाएं गिर गयी हैं और वे बहुत थक भी गयी हैं तब कृपा करके वे स्वयं ही अपनी माँ के बन्धन में बंध गये। भा० द०स्कन्ध अ० ६ पृ०१६२।।

मरे हुए बालकों को वापस लाना

दैत्यराज स्वायम्भुव मनुवन्तर में प्रजापति मरीचि की पत्नी ऊर्णा के गर्भ से छः पुत्र उत्पन्न हुए थे वे सभी देवता थे वे सब यह देखकर कि ब्रह्मा जी अपनी पुत्री से समागम करने के लिए उद्यत हैं हंसने लगे। इस परिहास रूप अपराध के कारण उन्हें ब्रह्मा जी ने शाप दे दिया और वे असुर योनि में हिरण्यकशिपु के पुत्र रूप से उत्पन्न हुए। अब योग माया ने उन्हें वहां से लाकर देवकी के गर्भ में रख दिया और उनको उत्पन्न होते ही कंस ने मार डाला दैत्यराज ! माता देवकी जी अपने उन पुत्रों के लिये अत्यन्त शोकातुर हो रही हैं और वे तुम्हारे पास हैं। अतः हम अपनी माता का शोक दूर करने के लिए इन्हें यहां से ले जायेंगे। इसके बाद वे शाप से मुक्त हो जायेंगे और आनन्द पूर्वक अपने लोक में चले जायेंगे। इनके छः नाम स्मर,उदगीथ,परिघुंग पतंग क्षुद्रभ्रत और घृणीं इन्हें मेरी कृपा से पुनः सदगति प्राप्त होगी। परीक्षत ! इतना कहकर भगवान श्री कृष्ण चुप हो गये। दैत्यराज बलि ने उनकी पूजा की। इसके बाद बलराम जी और श्रीकृष्ण उन बालकों को लेकर द्वारका लौट आये। तथा माता देवकी को उनके पुत्र सौंप दिये। उन बालकों को देखकर देवी देवकी के हृदय में वात्सल्य की बाढ़ आ गयी,उनके स्तनों से दूध बहने लगा। बार-बार उन्हें गोद में लेकर छाती से लगाती। और उनका सिर सूंघती।

।।भा०दू०ख०द०स्क०अ०८५-पृ०५५७-५८ ।।

भागवत कथा सुनने का लाभ

नारद जी बोले मुनीश्वरगण!आज सप्ताह श्रवण की मैंने यह बड़ी ही अलौकिक महिमा देखी। यहां तो जो बड़े-बड़े मूर्ख,दुष्ट और पशु पक्षी भी हैं वे सभी अत्यन्त निष्पाप हो गये हैं। अतः इसमें सन्देह नहीं कि कलिकाल में चित्त की शुद्धि के लिए इस भागवत कथा के समान मर्त्त्य लोक में पापपुन्ज का नाश करने वाला दूसरा पवित्र साधन नहीं हैं।

मुनिवर! आप लोग बड़े कृपालु हैं, आपने संसार के कल्याण का

विचार करके यह बिल्कुल निराला ही मार्ग निकाला है। आप कृपया यह तो बताइये कि इस कथा रूप सप्ताह यज्ञ के द्वारा संसार में कौन-२ लोग पवित्र हो जाते हैं। सनकादि ने कहा -जो लोग सदा तरह-तरह के पाप किया करते हैं,निरन्तर दुराचार में ही तत्पर रहते हैं, और उल्टे मार्गों से चलते हैं,तथा जो क्रोध की आग से जलते रहने वाले कुटिल और काम परायण हैं वे सभी इस कलियुग में सप्ताह यज्ञ से पवित्र हो जाते हैं। जो सत्य से अलग माता पिता की निन्दा करने वाले,तृष्णा के मारे व्याकुल आश्रम धर्म से रहित दम्भी,दूसरे की उन्नति देखकर जलने वाले और दूसरों को दुःख देने वाले हैं। वे भी कलियुग में सप्ताह यज्ञ से पवित्र हो जाते हैं। जो मदिरा पान,ब्रह्म हत्या सुवर्ण की चोरी, गुरु स्त्री गमन और विश्वास घात ये पाँच महा पाप करने वाले,छल छद्म परायण, क्रूर पिशाचों के समान निर्दयी, ब्राह्मणों के धन से पुष्ट होने वाले और व्यभिचारी हैं। वे भी कलियुग में सप्ताह यज्ञ से पवित्र हो जाते हैं। जो दुष्ट आग्रह पूर्वक सदा मन, वाणी या शरीर से पाप करते रहते हैं,दूसरे के धन से ही पुष्ट होते हैं,तथा मलिन मन और दुष्ट हृदय वाले हैं वे भी कलियुग में सप्ताह यज्ञ से पवित्र हो जाते हैं।

नारद अब हम तुम्हें एक प्राचीन इतिहास सुनाते हैं। पूर्व काल में तुंगभद्रा नदी के किनारे एक नगर था उस नगर में एक आत्म देव नामका ब्राह्मण रहता था। वह बड़ा सज्जन था। परन्तु उसकी पत्नी बहुत क्रूर स्वभाव की थी और झूठी थी। उनके कोई सन्तान नहीं थी उस ब्राह्मण ने धर्म मार्ग में आधा धन खर्च कर दिया। एक दिन वह ब्राह्मण सन्तान हीनता से दुःखी हो कर घर छोड़ कर वन में चला गया। वन में एक तालाब पर गया तो वहा एक संन्यासी को देखा संन्यासी के सामने वह रोया तो संन्यासी ने पूछा कि रोते क्यों हो? उसने कहा महाराज मैं सन्तान हीन हूँ मैं जिस गाय को पालता हूँ वह भी वांझ हो जाती है, मेरे लगाये वृक्ष पर फल नहीं लगते,आप मेरा उद्धार करो। महात्मा जी ने जब देखा कि यह बहुत आग्रह कर रहा है तो उन्होंने ब्राह्मण को एक फल देकर कहा कि इसे अपनी पत्नी को खिला देना, उसके एक पुत्र होगा। तुम्हारी पत्नी को

एक वर्ष तक सत्य,शौच,दया और एक ही समय पर भोजन करने का व्रत निभाना पड़ेगा ब्राह्मण ने घर आकर वह फल पत्नी को दे दिया और आप कहीं चला गया। उसकी स्त्री कुटिल तो थी ही। वह रोने लगी और अपनी सखी से कहा कि मैं इस फल को नहीं खाऊंगी। क्योंकि इसके खाने से गर्भ रहेगा और गर्भ से पेट बढ़ जायेगा फिर कुछ खाया-पिया भी नहीं जायेगा और मेरी शक्ति क्षीण हो जायेगी। और अकस्मात डाकुओं का आक्रमण हो गया तो भाग भी नहीं पाऊंगी। और प्रसव के समय यह टेढा हो गया तो कैसे बाहर आयेगा। जब मैं दुर्बल हो जाऊंगी तो नन्दरानी घर का सारा माल ले जायेगी। बच्चे का लालन पालन करने में भी अनेक कठिनाईयां आती हैं। मेरे विचार से तो वांझ या विधवा स्त्री सुखी रहती है। उसने फल नहीं खाया और अपने पति के पूछने पर कह दिया कि मैंने फल खा लिया। एक दिन उसकी बहन आयी तो सारा वृतान्त सुनाया और अपनी चिन्ता बतायी। बहन ने कहा कि मेरे पेट में बच्चा है, प्रसव होने पर वह बच्चा मैं तुझें दे दूंगी। और तू गर्भवती की तरह घर में रह। तू मेरे पति को कुछ धन दे देगी तो वे बच्चा तुझें दे देगें। और मैं प्रतिदिन आकर बच्चे का पालन पोषण करती रहूंगी। तू उस फल को जांच के लिए गाय को खिला दे। उसने वह फल गाय को खिला दिया। प्रतिज्ञानुसार जब स्त्री के पुत्र हुआ तो बालक के पिता ने चुपचाप उसको लाकर दे दिया। और उसने अपने पति आत्मदेव को सूचना दे दी कि मैंने पुत्र को जन्म दे दिया। आत्मदेव घर आया तो उसने कहा कि पतिदेव मेरे स्तनों में दूध नहीं है मैं बच्चे का पालन-पोषण कैसे करूंगी। आप ऐसा करो कि मेरी बहन को यहां रख लो तो बच्चे का पालन हो जायेगा। क्योंकि मेरी बहन के अभी पुत्र हुआ था और वह मर गया। तब आत्मदेव ने वैसा ही किया। इसके तीन महीने के बाद उस गाय ने भी एक मनुष्य के बच्चे को जन्म दिया, जो अत्यन्त सुन्दर था। आत्मदेव ने उसके भी सारे संस्कार कराये। आत्मदेव ने इस बालक का नाम गोकर्ण रखा क्योंकि उसके कान गाय जैसे थे। इन दोनों में गाय से उत्पन्न होने वाला बालक बड़ा धार्मिक था और दूसरा दुष्ट चाण्डाल था। वह खेलते हुए बच्चों को उठा कर कुएं में फेक

देता था। वेश्याओं के जाल में फसकर पिता की सारी सम्पति बेच डाली। एक दिन माता पिता को पीटकर घर के बर्तनों को बेच आया। आत्मदेव सोचने लगा कि इससे तो निसन्तान ही अच्छा था। आत्मदेव को दुःखी देखकर गोकर्ण ने कहा कि पिताजी संसार में कोई किसी का नहीं है आप मोह माया को छोड़कर वन में जाकर तपस्या करो। आत्मदेव ने वैसा ही किया ।

धुन्धुकारी को प्रेतयोनि की प्राप्ति और उससे उद्धार

पिता के वन में चले जाने पर उसके पुत्र ने जिसका नाम धुन्धुकारी था, उसने अपनी माता को बहुत पीटा और उससे कहा कि सारा धन जो तूने छिपा रखा है जल्दी बता वरना जलती हुई लकड़ी से तेरी खबर लूगां। उसकी धमकी से डरकर वह कुए में कूद पड़ी और मर गई। धुन्धुकारी पाँच वेश्याओं के साथ रहने लगा। एक दिन उन वेश्याओं ने धन के लालच में उसे सोते हुए को बांध कर मार डाला। और उसकी सारी सम्पति लेकर भाग गयी। धुन्धुकारी प्रेत बन गया और भूखा-प्यासा भटकने लगा। एक दिन उसके भाई गोकर्ण ने देखा कि वह प्रेत योनि में नाना प्रकार की सूरत बना बनाकर घूमता है। गोकर्ण और धुन्धुकारी का साक्षात्कार हुआ तो, धुन्धकारी ने रो-रोकर अपने दुःख सुनाये। गोकर्ण ने उसे आश्वासन दिया कि मैं तेरी मुक्ति का उपाय खोजता हूँ तू चिन्ता मत कर। रात में गौकर्ण ने खूब विचार किया और अनेक शास्त्रों को उलट-पुलट कर देखा परन्तु कहीं भी कोई उपाय नहीं मिला। तब वहां उपस्थित सभी लोगों ने कहा कि अब वही करो कि जो सूर्य नारायण कहें। तब गोकर्ण ने अपने तपोबल से सूर्य की गति को रोक दिया और सूर्य की स्तुति करने के बाद कहा कि आप मेरे भाई की मुक्ति का उपाय बताओ। गोकर्ण की प्रार्थना को सुन कर सूर्य ने कहा कि उसकी मुक्ति श्रीमद्भागवत से हो सकती है। इसलिये तुम इसका सप्ताह परायण करो। गोकर्ण ने भागवत सप्ताह की तैयारी की। उसमें आस-पास के गाँव से अन्धे-लगड़े,लूले,बूढ़े और मन्द

बुद्धि भी अपने पापों की निवृत्ति के लिए वहां आये। जब गोकर्ण कथा कहने लगे तो वह प्रेत भी वहां आ बैठा। वह उचित स्थान देखने लगा तो उसे वहां एक वांस रखा दिखाई दिया। उसमें सात गांठ थी उसी के नीचे के छिद्र में घुसकर बैठ गया। गोकर्ण ने सायं तक कथा सुनाई तो सायं को घटना घटी। उस वांस की एक गांठ तड़-तड़ की आवाज करती हुई फट गई। दूसरे दिन उसी प्रकार दूसरी गांठ और तीसरे दिन तीसरी। इस प्रकार सातों गांठों को फोड़ कर धुन्धकारी बारह स्कन्धों को सुनने से मुक्त हो गया। और दिव्य रूप धारण करके सबके सामने प्रकट हो गया। और वहां उपस्थित लोगों से बोला कि भागवत से अच्छा मुक्ति दिलाने का कोई साधन नहीं है। धन्य हैं वे लोग जो भागवत की कथा सुनते हैं। भागवत सप्ताह सब पापों को भस्म कर देता है। जो लोग भारतवर्ष में भागवत की कथा नहीं सुनते उनका जन्म वृथा ही है। जिस समय धुन्धुकारी ये बातें कह रहा था उसी समय उसके लिए वैकुण्ठ वासी पार्षदों सहित एक विमान उतरा, उससे सब ओर प्रकाश फैल रहा था। सबके सामने ही धुन्धुकारी उस विमान पर चढ गया। और स्वर्ग में आ गया।

इस कथा को पढ़कर पाठकगण अपनी बुद्धि से विचार कर बड़ी आसानी से यह समझ सकते हैं कि इन कथाओं को लिखने वाला आदमी कितना मूर्ख था,और वह लोगों को कितना मूर्ख समझता था। मरने के बाद कोई जीव उसी शरीर में वापस नहीं आता। मरने के बाद कोई जीव अति प्रिय सम्बन्धियों से भी बात-चीत करने नहीं आता, और प्रेत या भूत नाम की कोई योनि संसार में नहीं है। यह कितना बड़ा गप्प है कि गोकर्ण ने अपने तपोबल से सूर्य की गति को रोक दिया। और सूर्य ने धुन्धुकारी की मुक्ति का उपाय बताया कि भागवत की कथा कराओ। भला जड़ पदार्थ किसी से बातें करते हैं? फल खाने से गाय के पेट से मनुष्य का बच्चा पैदा हुआ, यह गप्प मारते हुए उस नीच को जरा सी भी लाज नहीं आयी। जब अत्यन्त पापी व्यक्ति भागवत की कथा सुनकर स्वर्ग में जा सकते हैं तो भागवतकार ने पापों को बढावा दिया कि नहीं? भला कोई पाप करने से क्यों डरेगा? कई करोड़ की बेईमानी करो, और एक लाख रू० लगाकर

भागवत की कथा कर दो। ऐसी पुस्तकों को पढ़कर और पाखण्डियों द्वारा दिये गये मुक्ति के प्रलोभन से पापों की वृद्धि हुई है और इस सबका उत्तरदायी है नकली ब्राह्मण। समाज के जिम्मेदार लोगों को चाहिय कि इन पुस्तकों को मिट्टी का तेल डालकर जलाया जाये। और इसकी कथा करने वालों का मुंह काला करके जलूस निकाला जाये।

श्रीमद्भागवत महात्म्य- प्रथम खंड अ० ४ व ५- पृ० सं० २० से ३४ तक।

२- पृथ्वी को जल में डूबी हुई देखकर ब्रह्मा जी बहुत देर तक सोचते रहे कि कैसे निकालू। जिस समय मैं लोक रचना में लगा हुआ था, उस समय पृथ्वी जल में डूब जाने से रसातल में चली गयी थी हम लोग सृष्टि कार्य में नियुक्त हैं, अतः इसके लिए हमें क्या करना चाहिए? अब तो जिनके संकल्प मात्र से मेरा जन्म हुआ है, वे सर्वशक्तिमान श्री हरि ही मेरा यह काम पूरा करे। ब्रह्मा जी इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि उनकी नाक से अकस्मात् अंगूठे के बराबर आकार का सूअर का बच्चा निकला। इसमें बड़े आश्चर्य की बात तो यह हुई कि आकाश में खड़ा हुआ वह सूअर का बच्चा ब्रह्मा जी के देखते ही बड़ा होकर क्षण भर में हाथी के बराबर हो गया। उस विशाल सूअर को देखकर मरीचि आदि मुनि जन सनकादि और सनकादिक और स्वायम्भू मनु के सहित श्री ब्रह्मा जी तरह- तरह के विचार करने लगे- अहो! सूकर के रूप में यह कौन दिव्य प्राणी यहां प्रकट हुआ है ? कैसा आश्चर्य है ? यह अभी- अभी मेरी नाक से निकला था, पहले तो यह अंगूठे के पोर के बराबर दीखता था, परन्तु एक क्षण में ही बड़ी भारी शिला के समान हो गया। अवश्य ही यज्ञमूर्ति भगवान हम लोगों के मन को मोहित कर रहें हैं। ब्रह्मा जी और उनके पुत्र इस प्रकार सोच ही रहे थे कि भगवान यज्ञ पुरूष पर्वताकार होकर गर्जने लगे।

प्रथम खण्ड अ० -५ पृ० २७

पाठक गण! देखेंगे कि भागवत लिखने वाले ने सृष्टि क्रम की तो कहीं भी परवाह नहीं कीं सारी उत्पत्ति सृष्टि क्रम के बिल्कुल विपरीत ही लिखी हैं। ब्रह्मा जी की नाक से सूअर का पैदा होना तो सर्वथा असम्भव है, परन्तु वैदिक धर्म के विरोधियों को मनोरंजन की अच्छी सामग्री मिल गयी है।

भुवन कोष का वर्णन

श्री शुकदेव जी बोले! भगवान की माया के गुणों का विस्तार इतना है कि यदि कोई पुरूष देवताओं के समान आयु पाले, तो भी मन या वाणी से इसका अन्त नहीं पा सकता। इसलिए हम नाम,रूप परिमाण और लक्षणों द्वारा मुख्य बातों को लेकर ही भूमंडल की विशेषताओं का वर्णन करेंगे। यह जम्बू दीप जिसमें हम रहते हैं इसका विस्तार एक लाख योजन है, और कमल पत्र के समान गोलाकार है। इसमें नौ-नौ हजार योजन विस्तार वाले नौ वर्ष हैं। जो इनकी सीमाओं का विभाग करने वाले आठ पर्वतों से बंटे हुए हैं। इनके बीचों - बीच इलावृत नाम का दसवां वर्ष है, जिसके मध्य में कुल पर्वतों का राजा मेरु पर्वत है। वह मानो भूमंडल रूप कमल की कर्णिका ही है, वह ऊपर से नीचे तक सारा स्वर्णमय है। और एक लाख योजन ऊंचा है। उसका विस्तार शिखर पर पच्चीस हजार और तलहटी में सोलह हजार योजन है। तथा सोलह हजार योजन ही वह पृथ्वी में भीतर घुसा हुआ है। अर्थात् भूमि के बाहर उसकी ऊंचाई चौरासी हजार योजन है। इलावृत के उत्तर में क्रमशः नील श्वेत और श्रृंगवान नाम के तीन पर्वत हैं- जो रम्यक, हिरन्यमय और कुरू नाम के वर्षों की सीमा बांधते हैं। वे पूर्व से पश्चिम तक खारे पानी के समुद्र तक फैले हुए हैं। उनमें से प्रत्येक की चौड़ाई दो हजार योजन है, तथा लम्बाई में पहले की तरह अपेक्षा दसमांश से कुछ कम है चौड़ाई और ऊंचाई तो सभी की समान है। इसी प्रकार इलावृत्त के दक्षिण की ओर एक के बाद एक निषध,हेमकूट और हिमालय नाम के तीन पर्वत हैं। नील आदि पर्वतों के समान ये भी पूर्व पश्चिम की ओर फैले हुए हैं और दस-दस हजार योजन ऊंचे हैं इनमें हरिवर्ष, किम्पुरुष और भारतवर्ष की सीमाओं का विभाग होता है। इलावृत के पूर्व और पश्चिम की ओर उत्तर में नील पर्वत दक्षिण में निषध पर्वत तक फैले हुए गन्ध मादन और माल्यवान नाम के दो पर्वत हैं। इनकी चौडाई दो-दो योजन है। और ये भद्राश्व और केतुमाल नामक दो वर्षों की सीमा नियत करते हैं। इसके सिवा मन्दर,मेरूमन्दर सुपार्श्व,और

कुमुद ये चार दस-दस हजार योजन ऊंचे और उतने ही चौड़े पर्वत मेरूपर्वत की आधारभूत भूनियों के समान बने हुए हैं। इन चारों के ऊपर इनकी ध्वजाओं के समान क्रमशः आम,जामुन,कदम्ब और बड़ के चार पेड़ हैं। इनमें से प्रत्येक ग्यारह सौ योजन ऊंचा है और इतनी ही इनकी शाखाओं का विस्तार है। इनकी मोटाई सौ-सौ योजन है, इन पर्वतों पर चार सरोवर भी हैं-जो क्रमशः दूध,मधु,ईख के रस और मीठे जल से भरे हुए हैं। इनका सेवन करने वाले यक्ष,किन्नर आदि उपदेवों को स्वभाव से ही सिद्धियां प्राप्त हैं। इन पर क्रमशः नन्दन,चैत्ररथ,वैभ्राजक और सर्वतो भद्र गन्धर्व आदि देवगण भी इनकी महिमा का बखान करते हैं।

मन्दराचल की गोद में जो ग्यारह सौ योजन ऊंचा देवताओं का आम्रवृक्ष है, उससे गिरि शिखा के समान बड़े-बड़े और अमृत के समान स्वादिष्ट फल गिरते हैं। वे जब फटते हैं तब उनसे सुगन्धित और मीठा लाल-लाल रस बहने लगता है, वही अरुणोदा नाम की नदी में परिणत हो जाता है। यह नदी मन्दराचल की शिखा से गिरकर अपने जल से इलावृत्त वर्ष के पूर्वी भाग को सीचती है। श्रीपार्वती जी की अनुचरी यक्षणियां इस जल का सेवन करती हैं। इससे उनके अंगों से ऐसी सुगन्ध निकलती है कि उन्हें स्पर्श करके वहने वाली वायु उनके चारों ओर दस-दस योजन तक सारे देश को सुगन्ध से भर देती हैं

इसी प्रकार जामुन के वृक्ष से हाथी समान बड़े-बड़े प्रायः विना गुठली के फल गिरते हैं। बहुत ऊंचे से गिरने के कारण वे फट जाते हैं। उनके रस से जम्बू नाम की नदी प्रकट होती है। जो मेरूमन्दर पर्वत के दस हजार योजन ऊंचे शिखर से गिरकर इलावृत्त के दक्षिण भू भाग को सींचती है। उस नदी के किनारों की मिट्टी उस रस से भीगकर जब वायु और सूर्य के संयोग से सूख जाती है, तब वही देवलोक को विभूषित करने वाला जाम्बूनद नामक सोना बन जाती है। इसे देवता और गान्धर्व आदि अपनी तरुणी स्त्रियों सहित मुकुट,केकण और करधनी आदि आभूषणों के रूप में धारण करते हैं।

सुपार्श्व पर्वत पर जो विशाल कदम्ब वृक्ष है,उसके पांच कोटरों से

पांच धाराएं निकलती हैं, उनकी मोटाई पांच पुरसे जितनी है, ये सुपार्श्व के सिर से गिरकर इलावृत्त के पश्चिमी भाग को अपनी सुगन्ध से सुवासित करती हैं। जो लोग इनका मधुपान करते हैं, उनके मुख से निकली हुई वायु अपने चारों ओर सौ-सौ योजन तक इसकी सुगन्ध फैला देती है।

इसी प्रकार कुमुद पर्वत पर जो शतवल्श नामक बड़ का वृक्ष है, उसकी जटाओं से नीचे की ओर बहने वाले अनेक नद निकलते हैं, वे सब इच्छानुसार भोग देने वाले हैं। उनसे दूध,दही,मधु,घृत, गुड़, अन्न, वस्त्र,शय्या आसन और आभूषण आदि सभी पदार्थ मिल सकते हैं ये सब कुमुद के शिखर से गिरकर इलावृत्त के उत्तरी भाग को सींचते हैं। इनके दिये हुए पदार्थों का उपभोग करने से वहां की प्रजा की त्वचा में झुर्रियां पड़ जाना, बाल पक जाना,थकान होना,शरीर में पसीना आना,तथा दुर्गन्ध निकलना, बुढ़ापा,रोग,मृत्यु, सर्दी,गर्मी की पीड़ा शरीर का कान्तिहीन हो जाना तथा अंगो का टूटना आदि कष्ट कभी नहीं सताते। और उन्हें जीवन पर्यन्त पूरा सुख प्राप्त होता है। कमल की कर्णिका के चारों ओर जैसे केसर होता है उसी प्रकार मेरू के मूल देश में उसके चारो ओर कुरंग, कुरर, कुसुम, त्रिकूट,शिशिर,पतंग,रूचक,निषध,शिनीवास,कपिल,शंख,वैदूर्य,हंस,नाग,कालंजर और नारद आदि पर्वत ओर हैं। इनके सिवा मेरू के पूर्व की ओर जठर और देवकुट नाम के दो पर्वत और हैं, जो अठारह-अठारह हजार योजन लम्बे तथा दो-दो-हजार योजन चौड़े और ऊंचे हैं। इसी प्रकार पश्चिमी की ओर पवन और परियात्र दक्षिण की ओर कैलाश और करवीर तथा उत्तर की ओर त्रिशंग और मकर नामके पर्वत हैं। इन आठ पहाड़ों से चारों ओर से घिरा हुआ सुवर्ण गिरी मेरू अग्नि के समान जग मगाता रहता है। कहते है कि मेरू के शिखर पर बीचोंबीच भगवान ब्रह्मा जी की सुवर्णपुरी है, जो आकार में समचौरस तथा करोड़ योजन विस्तार वाली है। उसके नीचे पूर्वादि आठ दिशा और उपदिशाओं में उनके अधिपति इन्द्र आदि आठ लोकपालों कीआठ पुरियां हैं। वे अपने अपने स्वामी के अनुरूप उन्हीं दिशाओं में हैं तथा परिणाम में ब्रह्मा जी की पुरी से चौथाई है।

हमारी समझ में यह नहीं आता कि इन पापियों का इन पुस्तकों

को लिखने का उद्देश्य क्या था, क्या उन्हें भारतवर्ष और वैदिक संस्कृति से शत्रुता थी। परन्तु शत्रुता का कोई कारण समझ में नहीं आता क्योंकि संस्कृति से उन्हें कुछ मिला ही है और भारत का अन्न ,जल खा-पीकर वे बड़े हुए हैं तो देश ने उन्हें दिया ही दिया है उनसे लिया तो कुछ नहीं तो फिर देश को बदनाम संस्कृति को बदनाम और ऋषियों को बदनाम करके क्या मिला उन्हें । भा० पंचम स्कन्ध अ० १६ पृ० ५१८।।

असुर लोग ब्रह्माजी से मैथुन करने को दौड़े

ब्रह्मा जी ने सात्विकी प्रभा से देदीप्यमान होकर मुख्य-मुख्य देवताओं की रचना की। उन्होनें क्रीड़ा करते हुए ब्रह्मा जी के त्यागने पर उनका वह दिनरूप प्रकाशमय शरीर ग्रहण कर लिया। इसके पश्चात् ब्रह्मा जी ने अपने जघन देश से कामासक्त असुरों को उत्पन्न किया वे अत्यन्त काम लोलुप होने के कारण उत्पन्न होते ही मैथुन के लिये ब्रह्मा जी की ओर दौड़े। यह देखकर पहले तो वे हंसे, किन्तु फिर उन निर्लज्ज असुरों को अपने पीछे लगा देखकर भयभीत औार क्रोधित होकर बड़े जोर से भागे। तब उन्होंने भक्तों पर कृपा करने के लिये उन की भावना के अनुसार दर्शन देने वाले श्री हरि के पास जाकर कहा- परमात्मन् मेरी रक्षा करो, मैंने तो आपकी आज्ञा अनुसार ही प्रजा उत्पन्न की,परन्तु यह तो पाप में प्रवृत्त होकर मुझे ही तंग करने चली है, नाथ!एक मात्र आप ही दुःखी का जीवों दुःख दूर करने वाले हैं, और जो आपकी चरण शरण में नहीं आते, उन्हें दुःख देने वाले भी एक मात्र आप ही हैं। उन्होंने ब्रह्माजी क़ी आतुरता देख कहा-तुम अपने इस काम कलुषित शरीर को त्याग दो। भगवान के यों कहते ही उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया। पाठ्क गण कि ऐसा कमजोर (ब्रह्मा भी) सृष्टि कर्त्ता माना जा सकता है, जिससे उसी के बनाये हुए असुरों ने सम्भोग किया हो। और जो उनसे भी अपनी रक्षा न कर सका हो। एक प्रश्न भी पैदा होता कि पहली बार तो ब्रह्मा जी की उत्पत्ति विष्णु के नाभि कमल से हुई थी, अब जब वह एक बार मर गया तो पुनः उसकी

उत्पत्ति कब और किस प्रकार हुई, इसका कोई विवरण सारे पौराणिक साहित्य में नहीं मिलता। इस का अर्थ यह हुआ कि असुरों से व्यभिचार के बाद शरीर धारी ब्रह्माजी का अस्तित्व ही समाप्त हो गया था। यदि कोई पौराणिक विद्वान् साहस रखता हो तो वह हमें ब्रह्माजी की इस मृत्यु के बाद पुनः जन्म लेने का उल्लेख किसी भी पौराणिक साहित्य में दिखाये, हम उसका सम्मान करेंगे। ।। भा० स्क०३, अ० २०, पृ०२५६ ।।

सौ योजन ऊंचा वृक्ष

इस प्रकार वन की शोभा निहारते हुए देवगण जब कुछ आगे बढ़े तब उन्हें पास ही एक वटवृक्ष दिखाई दिया। वह वृक्ष सौ योजन ऊंचा था तथा उसकी शाखाएं पचहत्तर योजन तक फैली हुई थीं। उसके चारों ओर सर्वदा अविचल छाया बनी रहती थी इसलिए गर्मी का कष्ट कभी नहीं होता था। इस बात के गल्त होने में क्या सन्देह है, हिमालय पर्वत की सबसे ऊंची चोटी पांच मील है। उस पर वट वृक्ष लगभग ८०० मील ऊंचा भागवतकार के घर में ही खड़ा होगा। भागवत स्कन्ध -४ अ००६ ।।

मुर्दे (शव) को मथकर बालक उत्पन्न किये

ऐसा निश्चय कर उन्होंने मृत राजा के शव को मथा,उनकी जांघ को बड़े जोर से मथा तो उससे एक वोना पुरुष उत्पन्न हुआ वह कौए के समान काला था, उसक सारे अंग और विशेषकर भुजाएं बहुत छोटी थी, जबड़े बहुत बड़े, टांगें छोटी,नाक चपटी, नेत्र लाल और केश तांवे के से रंग के थे। उसने बड़ी दीनता से पूछा मैं क्या करूं, तो ऋषियों ने कहा निषीद(बैठजा) इसी से वह निषाद कहलाया। उसने जन्म लेते ही राजा वेन के सब पापों को अपने ऊपर ले लिया। ।भा०स्क०४-अ०१४।।

राजा जनक की उत्पत्ति

राजा निमि निसन्तान मर गया तो ऋषिओं ने राज्य के संचालन और अराजकता के भय से राजा निमि के शरीर का मंथन किया,उस मंथन से एक कुमार उत्पन्न हुआ,जन्म लेने के कारण उसका नाम जनक हुआ। विदेह से उत्पन्न होने से वह विदेह कहलाया, और मंथन से उत्पन्न होने से वह मिथिला कहलाया, उसी ने मिथिलापुरी बसाई थी। जांघ को मथकर या जांघ के किसी निकट के अंग को मथकर मुर्दे से निषाद की तथा उसी प्रकार राजा जनक की शव मंथन से हुई उत्पत्ति क्या कोरी गप्पें नहीं हैं। क्या इन गप्पों को वैज्ञानिक तरीकों से सिद्ध किया जा सकता है?

।। भ०स्क०६अ०१३।।

श्रृंगी ऋषि हरिणी से और वशिष्ठ जी वेश्या से उत्पन्न हुए।

हरिणी से श्रृंगी ऋषि और वेश्या से वशिष्ठ मुनि उत्पन्न हुए थे। ऋषि श्रृंगी स्त्रियों का नाचना,गाना बजाना देखकर स्त्रियों के वश में हो गये। भागवतकार तथा अन्य पुराणकारों ने किसी भी ऋषि-मुनि को कलंकित किये बिना नहीं छोड़ा प्रत्येक पर व्यभिचार का दोष लगाया है, इन पुराणों पर विश्वास रखने वाला कोई भी हिन्दू विधर्मियों को उत्तर नहीं दे सकता। अनेक बार शास्त्रार्थों में बुरी तरह पराजित हुए हैं, परन्तु इतने निर्लज्ज हो गये हैं कि इन पर कोई असर नहीं होता। ।।भा०स्क०११-अ०८।।

स्त्रियों के गर्भ से जड़ जंगम की रचना

हे परीक्षत! अब तुम कश्यप पत्नियों के नाम सुनो, वे लोक माताएं हैं उन्हीं से यह सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है। उनके नाम ये हैं। अदिति,दिति,दनु,काष्ठा,अरिष्टा,सुरसा,इला,मुनि,क्रोधवशा, तागा, सुरभि, सरभा और तिमि। इनमें तिमि के पुत्र हैं-जल जन्तु और सरमा के वाघ आदि

हिंसक जीव। सुरभि के पुत्र हैं भैस,गाय,तथा दूसरे दो खुर वाले पशु। तागा की सन्तान हैं-बाज,गीध आदि शिकारी पक्षी। मुनि से अप्सराएं पैदा हुई। क्रोधवशा के पुत्र हुए-सांप,बिच्छू आदि विषैले जन्तु। इला से- वृक्ष,लता आदि पृथ्वी में उत्पन्न होने वाली वनस्पतियां और सुरसा से यातुधान (राक्षस)अरिष्टा से गन्धर्व और काष्ठा से घोड़े आदि एक खुर वाले पशु उत्पन्न हुए।

इन देश द्रोहियों से कोई पूछे कि एक स्त्री के गर्भ से पेड़ पौधे कैसे उत्पन्न हो सकते हैं? स्त्रियों से वाघ,हाथी,घोड़े सांप आदि का पैदा होना कितनी मूर्खता पूर्ण है। भारतवर्ष का इतिहास और संस्कृति को बदनाम करने वाले पुराणकार कोई ईसाई या मुसलमान नहीं थे। ये इस राष्ट्र में पैदा होकर इसका अन्न जल खा-पीकर पले और इसी के साथ द्रोह किया, ऐसा व्यक्ति हजारों जन्म लेने के बाद भी इस पाप से मुक्त नहीं हो सकता।

ब्रह्मा के शरीर से सर्प पैदा हुए

एक बार ब्रह्माजी ने सृष्टि की वृद्धि न होने के कारण बहुत चिन्तित होकर हाथ-पैर आदि अवयवों को फैलाकर लेट गये और फिर क्रोध वश उस भोगमय शरीर को त्याग दिया उससे जो बाल झड़कर गिरे वे सर्प हुए तथा उसके हाथ-पैर सिकोड़कर चलने से क्रूर स्वभाव सर्प और नाग हुए , जिनका शरीर गुणरूप में कंधे के पास फैला हुआ होता है। भागवत के स्कन्ध ६ के तीसरे अध्याय के श्लोक अट्ठाईस में सर्पो की उत्पत्ति कश्यप की पत्नि क्रोधवशा के गर्भ से मानी है। और यहां सर्पों की उत्पत्ति ब्रह्मा की मृतक देह से मानी है। दोनों में कौन सी बात सत्य मानी जाये पाठक स्वयं निर्णय करें। हमारे विचार से तो दोनों ही गलत हैं ब्रह्मा जी बार-बार मरते रहते हैं परन्तु उनके बार-बार जन्म लेने का कोई वर्णन नहीं मिलता यह भी एक तमाशा ही हैं ।। भा०स्क०३ अ०२०।।

मूंज पर वीर्य गिरने से लड़का लडकी जन्मे

शतानन्द का पुत्र सत्यधृति था, वह धनुर्वेद में अत्यन्त निपुण था, सत्यधृति के पुत्र का नाम शरदवान था। एक दिन उर्वशी को देखने से शरदवान का वीर्य मूंज पर गिर पड़ा। उससे एक शुभ लक्षण वाले पुत्र और पुत्री का जन्म हुआ। राजा शान्तुन की उस पर दृष्टि पड़ गई क्योंकि वे उधर शिकार खेलने के लिये गये थे। उन्होंने दयावश दोनों को उठा लिया। उनमें जो पुत्र था उसका नाम कृपाचार्य हुआ और जो कन्या थी उसका नाम कृपी हुआ। यही कृपी गुरु द्रोणाचार्य की पत्नी बनी।

पाठक जरा विचार करें कि उस युग के लोग क्या सभी प्रमेह के रोगी होते थे, स्त्री को देखते ही उनका वीर्यपात होजाता था। सती और पार्वती को देखकर ब्रह्मा का वीर्यपात हुआ। व्यास का वीर्यपात होने से अरणी मंथन के साथ वीर्य भी मथ गया और उससे शुकदेव जी पैदा हो गये। शरदवान का मूंज पर वीर्यपात हो गया और उसी समय दो बच्चे पैदा हो गये, वह वीर्य न सूखा न सड़ा। उसमें स्त्री का रज मिले बिना ही बच्चे बन गये। मोहिनी को देखकर शिव का वीर्यपात होगया था और उसका वीर्य जहां-जहां गिरा वहीं-वहीं सोने-चांदी की खान बन गई। इस विज्ञान को पौराणिक पण्डित को परीक्षण करके प्रमाणित करना चाहिए।

।। भा०स्क० ६-अ०२१।।

दिति का सौ वर्ष तक गर्भ धारण

दिति को अपने पुत्रों से देवताओं को कष्ट पहुंचाने की आशंका थी, इसलिये उसने दूसरों के तेज का नाश करने वाले उस कश्यप जी के वीर्य को अपने पेट में ही रखा। उस गर्भस्थ तेज से ही लोकों में सूर्यादि का प्रकाश क्षीण होने लगा तथा इन्द्रादि लोकपाल भी तेज हीन हो गये।

।। भा०स्क०३अ०१५।।

क्या सौ वर्ष तक गर्भ को रोक रखना सम्भव है, गर्भ को रोकना स्त्री के अपने हाथ में नहीं है सौ वर्ष तो क्या एक दिन भी अपनी इच्छा

से नहीं रोक सकती। सौ वर्षो में तो व्यक्ति बूढ़ा होकर मर जाता है। सूर्य के तेज को क्षीण नहीं किया जा सकता ये पुराणकार तो शेखचिल्ली का भी बाप है।

शिवजी की अरवों खरवों सेविकाएं

उनकी अरबों-खरबों दासियों से सेवित भगवान शंकर परम पुरुष परमात्मा का चिन्तन करते हैं। इस सम्पूर्ण पृथ्वी की मानव जन संख्या इस समय (२००७) में लगभग साढ़े छः अरब है और इसमें आधी भी स्त्रियां नहीं हैं,परन्तु भागवत पुराण के गप्पी ने अकेले शिव के लिए केवल इलावृत्त में जो कि हिमालय का एक स्थान है अरबों-खरबों औरतें शिवजी के लिये पैदा कर दीं। मजे की बात यह है मर्द केवल एक शंकर है, और उसके विहार के लिए औरतें अरबों-खरबों वहां रहती हैं। अब यह कौन बता सकता है कि शंकर का इतनी औरतों से पेट भरा या नहीं अर्थात् मन की तृप्ति हुई या नहीं। इतनी औरतों से घिरा रहने वाला व्यक्ति परमात्मा का ध्यान कर ही नहीं सकता।

कर्ण का जन्म

कुन्ती ने दुर्वासा से देवताओं को बुलाने की विद्या सीख ली। एक बार विद्या की परीक्षा लेने के लिये कुन्ती ने सूर्य देव का आवाहन किया। उसी समय सूर्य देव वहां आ गये। उनको देखकर कुन्ती विस्मित हुई। उसने कहा कि भगवन! मुझे क्षमा करें। मैंने परीक्षा के लिये ही इस विद्या का प्रयोग किया था। सूर्य ने कहा कि देवी! मेरा दर्शन निष्फल नहीं जाता । अब मैं हे सुन्दरी तुमसे एक पुत्र उत्पन्न करना चाहता हूँ हां तुम्हारी योनि दूषित न हो इस का उपाय मैं कर दूगां। यह कहकर सूर्य भगवान ने कुन्ती

के गर्भाधान कर दिया और वे स्वर्ग चले गये। उसी समय कुन्ती के पुत्र हुआ जो अति तेजस्वी था। कुन्ती लोक-लाज से डर गयी। उसने दुःख के साथ बालक को नदी के जल में छोड़ दिया।

भागवंतकार ने इस कथा को गढ़ कर कुन्ती को व्यभिचारणी और सूर्य को व्यभिचारी घोषित किया है सम्भोग से योनि के दूषित हो जाने पर सूर्य देव ने कोई दवा तो लगायी नहीं जब पुरूष संग हो गया तो योनि तो दूषित हो ही जाती है फिर कुमारीपना कहां रह जाता है। भागवतकार कुन्ती को पुरूषगामी भी बताता है और शुद्ध भी रखना चाहता है। यह सूर्य तो आग का गोला है जो इस पृथ्वी से लाखों गुणा बड़ा है भला किसी के बुलाने पर वह कैसे आ सकता है वह जड़ पदार्थ है किसी स्त्री से सम्भोग सर्वथा असम्भव है।

।। भा०स्क०६ अ० २४।।

मरूद्गणों की उत्पत्ति

दिति नियमोपनियम को पालन करते-करते बहुत दुर्बल हो गयी थी। विधाता ने भी उसे मोह में डाल दिया था इसलिये एक दिन संध्या के समय जूटे मुंह बिना आचमन किये और बिना पैर धोये ही वह सो गयी। योगेश्वर इन्द्र ने देखा कि यह अच्छा अवसर हाथ लगा है। वे योगबल से झटपट सोयी हुई दिति के गर्भ मे प्रेवश कर गये। उन्होंने वहां जाकर सोने के समान चमकते हुए गर्भ के वज्र के द्वारा सात टुकडे कर दिये जब इन्द्र उनके टुकडे-टुकडे करने लगे, तब उन सबों ने हाथ जोडकर इन्द्र से कहा-देवराज तुम हमें क्यों मार रहे हो? हम तो तुम्हारे भाई मरूद्गण हैं। तब इन्द्र ने कहा अच्छी बात है तुम लोग मेरे भाई हो अब डरो मत हे परीक्षत ! जैसे अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से तुम्हारा कुछ नहीं बिगडा वैसे ही भगवान की कृपा से दिति के गर्भ के टुकडे-टुकडे होने पर भी मरा नहीं

है। वज्र जैसा भंयकर अस्त्र लेकर इन्द्र अपनी खास मौसी दिति के गर्भाशय में घुस गये और एक गर्भ के ४६ टुकडे कर दिये। फिर सभी टुकड़ों के हाथ पैर सभी अंगों सहित उन्चास बालक बन गये इतना गपोडा मारते हुए तनिक भी लज्जा नहीं आयी। लिखने वाला तो मूर्ख था ही परन्तु आश्चर्य तो उनका है जो इन बातो को सत्य मानकर भागवत की कथा में लाखों रूपये खर्च करते हैं और मुक्ति की आशा करते हैं।

।। भा० स्क० ६ अ० १८, पृ०६६२।।

भागवत में विष्णु ने कहा इस समय मेरा वह शेष नाम का अंश देवकी के गर्भ में स्थित है उसे वहां से निकाल कर तुम रोहिणी कि गर्भाशय में रख दो। तब योगमाया ने देवकी का गर्भ ले जाकर रोहिणी के गर्भ में रख दिया। ।। भा० स्क० १० अ०२।।

एक स्त्री के पेट से बिना आपरेशन के गर्भ निकाल कर दूसरी स्त्री के दूर स्थान पर ले जाकर गर्भ में प्रविष्ट किया जा सके, और दोनों में से किसी भी स्त्री को पता भी न चले कि गर्भ कब निकाल लिया और कब अन्दर घुसेड़ दिया गया। यह गपोड़ा नहीं तो और क्या है ?

शशबिन्दु के दस हजार स्त्रियां और एक अरब बेटे थे।

यशस्वी राजा शशबिन्दु के दस हजार पत्नियां थी, उनके एक-एक से एक-एक लाख सन्तान उत्पन्न हुई थी। इस प्रकार उस के एक अरब (सौ करोड़) बेटे थे। भा०स्क०६ अ०२३।। विश्व का गपोडेबाज भागवतकार का मुकाबला नहीं कर सकता। विश्व का कोई भी व्यक्ति अपनी दस हजार पत्नियों से एक अरब सन्तान नहीं कर सकता। यदि कहीं गप्पियों की प्रतियोगिता हो तो भागवतकार का प्रथम स्थान रहेगा।

तीन करोड अट्ठासी लाख अध्यापक

शुकदेव जी कहते हैं कि मैंने सुना है कि यदुवंश के बालकों की शिक्षा के लिये तीन करोड अट्ठासी लाख अध्यापक रहते थे।

।। भा० सक० १० अ० ६०।।

पाठकगण! थोड़ी देर मन को एकाग्र करके विचार करें कि तीन करोड़ अट्ठासी लाख अध्यापक थे तो विद्यार्थी कितने होंगे।

राजा उग्रसेन के एक नील सैनिक थे।

राजा उग्रसेन के एक नील सैनिक थे। भा० स्क० १० अ० ६०।। भागवतकार के इन गपोड़ों का यदि कोई यह हिसाब लगावे कि रहने के लिए कितनी भूमि की आवश्यकता होती होगी तो सारी पृथ्वी पर इतने लोगों को सोने के लिए खाटें भी नहीं विछायी जा सकतीं। खाने-पीने की सामग्री तो उपलब्ध होने का प्रश्न ही नहीं है। पानी पीकर समुद्र को सुखा देगें। और मल-मूत्र करेंगे तो स्वयं उनका ही धरती पर जीना दुश्वार हो जायेगा। जब सैनिक एक नील थे तो अन्य जनता तो कई नील होनी चाहिए। क्या अब भी किसी को सन्देह हो सकता है कि भागवत गल्पों का पुलिन्दा है और इसका लिखने वाला महाधूर्त था।

काल यवन की सेना

भागवत के दसवें स्कन्ध के पचासवें अध्याय में लिखा है कि कालयवन ने तीन करोड़ सेना लेकर मथुरा को घेर लिया। आज सारी पृथ्वी के राजाओं की सेना मिलाकर इतनी हो सकती है। तब मथुरा जैसे शहर को घेरने के लिए तीन करोड़ सेना की क्या तुक है? यह चन्डू खाने की गप नहीं तो क्या है?

बलराम जी का हस्तिनापुर उखाड़ना

बलराम जी अपना हल लेकर खडे हो गये मानों त्रिलोकी को भस्म कर डालेंगे। उन्होंने हल की नोक से बार- बार चोट करके हस्तिनापुर शहर को उखाड़ लिया। और डुबाने के बड़े क्रोध से गंगा की ओर खींचने लगे। हल से खींचने पर हस्तिनापुर ऐसे कांपने लगा, जैसे जल में नाव

डगमगाती है, जब कौरवों ने देखा कि हमारा शहर तो गंगा जी में गिर रहा है तो वे घबरा गये।। भा० स्क० १० अ० ६८।।

हस्तिनापुर नगर जो कौरवों की राजधानी था इस धूर्त भागवतकार ने इसे तुलसी का पौंधा ही समझ लिया क्या ? और वहां रहने वाले लोगों को तुलसी पर बैठने वाले मक्खी मच्छर ही समझा होगा। शायद भागवतकार ने यह सोचा होगा कि आगामी समय में जो लोग होंगे और तेरे इन गपोड़ों को सत्य मान लेंगे। कोई समझने वाला तो होगा ही नहीं इसलिए जो चाहो लिख मारो।

समुद्रों का हाल

सात समुद्र क्रमशः खारे जल, ईख के रस, मदिरा, घी, दूध, मट्ठे और मीठे जल से भरे हैं ये सातों द्वीपों की खाइयों के समान हैं और परिणाम में अपने भीतर वाले द्वीप के बराबर हैं। ।। भा० स्क० ५ अ०।। भागवत के सभी भक्तों से निवेदन है जो भागवत की कथा करते हैं और जो सुनते हैं वे सभी प्रयास करके इन विलक्षण समुद्रों का पता लगाये और भागवत की गप्प को सत्य प्रमाणित करें। इसके अनेक लाभ होंगे। संसार के लोगों को घी सस्ता मिलेगा। ईख के रस से चीनी बनती है वह भी बहुत सस्ती हो जायेगी। घी,दूध,दही की सारी समस्या समाप्त हो जायेगी। आज कल घी दूध तो बहुत से लोगों को मिल नहीं पाता। भागवत की कथा करने वाले इन समुद्रों की खोज करके संसार का कल्याण करें। वरना तुम्हारें गप्पों को दुनियाँ समझ चुकी है। अब तुम्हें जान बचानी मुश्किल हो जायेगी।

गज और ग्राह का एक हजार वर्ष तक चला युद्ध

दूसरे हाथी और हथिनियों ने देखा कि उनके स्वामी को बलवान ग्राह बड़े वेग से खीच रहा है और वे बहुत घबरा रहे हैं। उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वे बड़ी विकलता से चिंघाड़ने लगे। बहुतों ने उन्हें सहायता पहुंचा कर जल से बाहर निकालना चाहा। परन्तु उसमें वे असमर्थ ही रहे। गजेन्द्र

और ग्राह अपनी पूरी शक्ति लगाकर भिडे हुये थे कभी गजेन्द्र ग्राह को बाहर खीच लाता तो कभी ग्राह गजेन्द्र को भीतर खीच लेजाता। परीक्षत इस प्रकार उनको लड़ते-लड़ते एक हजार साल बीत गये। और दोनों ही जीवित रहे यह घटना देख कर देवता भी आश्चर्य में पड़ गये।

।। भा०स्क० ८-अ० २।।

एक हजार साल तक बिना भोजन - पानी में निरन्तर लड़ते रहे और जिन्दा बने रहे। यह कोरी गप्प है। परन्तु जब पापियों ने गप्प मारने का टेका ही ले लिया तो गप्प तो मारेंगे ही। इतने दिनों तक विष्णु जी कहां सोते रहे। जो एक हजार वर्ष बाद गज को बचाने आये। विचारशील लोगों के लिये मनोरंजन का साधन तो हो सकती है। यदि चुटकले कह सुन कर दिल बहलाने की जरूरत पडें तो बस दस-बीस आदमी भागवत लेकर बैठ जायें। एक पढ़े और शेष सब सुनें। सुनने से हंसी अवश्य आयेगी और हंसी से स्वास्थ्य लाभ भी अवश्य होगा।

मत्स्य अवतार का शरीर चार लाख कोस का था

सप्त ऋषियों के कहने से राजा सत्यव्रत ने भगवान का ध्यान किया। उसी समय उस महान समुद्र में मत्स्य के रूप में भगवान प्रकट हुए। भगवान का शरीर सोने के समान चमकता था और शरीर का परिमाण था चार लाख कोस। उनके शरीर में एक बड़ा भारी सींग भी था। भगवान ने पहले जैसी आज्ञा दी थी,उसके अनुसार वह नौका भगवान के सींग में बांध दी। भा०स्क०८अ०२४।।

पाठक गण विचार करें कि इस पृथ्वी व सब समुद्रों का विस्तार भी चार लाख कोस का नहीं हो सकता है। तब उसमें इतनी बड़ी पछली कैसे आगयी। यहा हो सकता है कि भागवत लिखने वाले के घर के घड़े में पड़ी रही होगी। इस प्रकार की मिथ्या बातों के भण्डार भागवत पुराणको कोई थोड़ी सी वुद्धि वाला व्यक्ति भी धर्म ग्रन्थ मानने को तैयार नहीं होगा।

जिन्होंने अपनी वुद्धि पर ताला लगा रखा है उनकी बात अलग है।

देवताओं और असुरों की विचित्र सवारियां

जब देवासुर संग्राम हुआ तो रण भूमि में रथियों के साथ रथी,पैदल के साथ पैदल,घुडसवारों के साथ घुडसवार भिड़ गये। उनमें से कोई-कोई वीर ऊटो पर, हाथियों पर और गधों पर चढ़कर लड़ रहे थे तो कोई -कोई मृग-भालू, वाघ और सिंहों परं कोई-कोई सैनिक गिद्ध, बगुले, बाज और भास पक्षियों पर चढ़ कर लड. रहे थे,बहुत से मच्छ, शरभ, भैंसे, गैंडे, वैल, नीलगाय और जंगली सांड़ों पर सवार थे। किसी-किसी ने सियारिन, चूहे, गिरगिट और खरहों पर ही सवारी कर ली थीबहुत से मनुष्य बकरे कृष्णसार मृग, हंस और सूअरों पर चढ़े थे। इस प्रकार जल,थल एवं आकाश में रहने वाले तथा भयंकर शरीर वाले बहुत से प्राणियों पर चढ़कर कई दैत्य दोनों सेनाओं में आगे-२ घुस गये। इन सवारियों से अनुमान होता है कि देवासुर संग्राम जिसका भागवत वाले ।।भा०स्क०८-अ०१०।। ने ढिढोरा पीट रखा है वह कल्पित है। क्या मनुष्यों की सवारी चूहा,गिरगिट,मछली,खरगोश,बगुला,गिद्ध,बाज आदि भी हो सकते हैं। और इन सवारियों पर चढ़कर युद्ध लड़े जा सकते हैं। लगता है कि भागवत कार के दिमाग में गोबर भरा हुआ था जो ऐसी -२गल्प पुस्तकों में लिखकर संसार का अपकार करके दुर्गति का मार्ग अपना लिया।

बुढ़ापा देकर जवानी ली

ययाति महाराज ने अपने पुत्र से कहा कि बेटा तुम अपनी जवानी मुझे दे दो, और अपने नाना का दिया हुआ बुढ़ापा तुम ले लो। क्योंकि मैं अभी विषय भोगों से तृप्त नहीं हुआ हूँ। ताकि कुछ वर्षों तक मैं और स्त्री का आनन्द भोग लूं। इस पुत्र ने सहर्ष अपने पिता का बुढापा लेकर अपनी जवानी उसे दे दी। राजा जवानी लेकर पूर्ववत् स्त्री विषय का सेवन करने

लगे। राजा को विषय भोगों का आनन्द लेते-लेते एक हजार वर्ष बीत गये। राजा को वैराग्य हो जाने पर अपनी पत्नि से बात करके अपने पुत्र की जवानी उसे वापस दे दी। और अपना पहले वाला बुढापा वापस ले लिया।

।। भा०स्क०६अ०१६

पाठक ! राजा को अपने बेटे से विषय भोग के लिए अपना बुढापा उसे देकर उसकी जवानी लेने की बात करने में शर्म नहीं आई। कोई भी बाप अपने बेटे ऐसे बेहूदीबात करने में अवश्य ही लज्जामहसूस करेगा। राजा ययाति भागवतकार की तरह से निर्लज्ज नहीं थे। भागवतकार ने ययाति महाराज को भी वाममार्गी सम्प्रदाय का सदस्य बना लिया। जिसमें मां-बहन बेटी बेटा का भैरवी चक्र में कोई ध्यान नहीं रखा जाता । क्या बुढापे और जवानी की अदला-बदली भी हो सकती है? भागवत बनाने वाले दुष्ट को ऐसी बेतुकी कहानियां घड़कर लिखने से यश नहीं मिल सकता ,आज वह अपने को हंसी का पात्र बनाकर गालियां सुन रहा है।

यमराज का अन्याय

भागवत के दसवें स्कन्ध के चौसटवें अध्याय में एक कथा आती है। उसमें बताया है कि महादानी राजा नृग की गायों में किसी ब्राह्मण की गाय आकर मिल गई। राजा को पता नहीं चला और उसने अन्य गायों के समान उस गाय को एक अन्य ब्राह्मण को दान कर दी। जब उस गाय को वे ले चले तो उसके असली स्वामी ने कहा कि गाय मेरी है। दूसरे ने कहा कि मुझे राजा नृग ने दान में दी है। अतः मेरी है इस पर राजा नृग ने गाय के स्वामी को बदले में मूल्य या एक लाख गाय देने को कहा किन्तु बिना लिए वह चला गया। केवल इसी दोष पर राजा नृग को यमराज ने गिरगिट की योनि में डाल दिया।

वह एक कूप में पड़ा था। श्री कृष्ण जी ने उसे निकाल कर पुनः मानव योनि प्रदान कर दी। इस कथा से स्पष्ट है कि नृग ने न तो ब्राह्मण

की गाय चुराई थी और न उसे यह पता था कि वह गाय मेरी नहीं है जो उसकी गायों में आकर मिल गई है। राजा ने उसे अपनी गाय समझकर अपनी दूसरी गायों की तरह दान कर दी। पता लगने पर उसे बहुत दुःख हुआ और उसने ब्राह्मण को एक के बदले में एक लाख गाय देने को कहा। इसमें राजा का कोई भी दोष सिद्ध नहीं होता। उन कर्मचारियों का तो दोष माना जा सकता है जो गायों की देखभाल करते थे उन्हें ही यह पता हो सकता है कि इनमें कौन सी गाय बाहर से आकर हमारी गायों में मिल गयी है। राजा का काम गौशाला की देखभाल करना नहीं है। दान करते समय राजा के आदेश पर उतनी गाय निकाली जाती हैं और दान कर दी जाती हैं। इसका दण्ड भी राजा के नौकरों को मिलना चाहिए था राजा को नहीं। राजा को गिरगिट की योनि में डाल ना कहां का न्याय है? क्या यमराज के यहां भी अंधेर गर्दी चलती है। क्या पुराणों में इसी को न्याय माना जाता है। यदि यही न्याय है तो फिर अन्याय किसे कहोगे?

श्री कृष्ण जी कहते हैं- मेरे लोगों यदि ब्राह्मण अपराध करे तो भी उससे द्वेष मत करो, वह मार दे,गालियां या शाप दे तो भी सदा नमस्कार किया करो। जैसे मैं सावधान तीनों समय ब्राह्मण को नमस्कार करता हूं वैसे ही तुम भी किया करो। मेरी इस आज्ञा का उल्लंघन करने वाले को दण्ड मिलेगा। एक बार वृकासुर ने शिव की तपस्या की,उसने अपने अंग काट काट कर हवन किया । जब अपने सिर को काटने लगा तो शिव ने प्रकट होकर कहा कि मैं तेरी तपस्या से प्रसन्न हूं तू मुझसे वरदान मांग ले। तो उसने वर मांगा- मैं जिसके सिर पर हाथ रख दूं वही मर जाय। शिव ने हंसकर कहा ऐसा ही होगा। कह कर मानो उसे तो अमृत सा पिला दिया वृकासुर के मन में इच्छा हुई कि पार्वती को हर लूं। वर की परीक्षा के लिए उन्हीं के सिर पर हाथ रखने का उद्योग करने लगा। तब शिवजी अपने ही दिये हुये वरदान से भयभीत होकर भागने लगे। भगवान विष्णु ने शंकर को कष्ट में देखा तो ब्रह्मचारी दूर से ही धीरे-धीरे उस असुर के पास आने लगे । उन्होंने उससे कहा दानवेन्द्र यदि आप शिव को जगत गुरु मानते हो तो उसके वर की परीक्षा अपने सिर पर हाथ रख

कर कर लो। विस्मृत हो जाने से उस दुर्बुद्धि ने अपने सिर पर अपना हाथ रख लिया और उसी समय उसका सर फट गया और वह मर गया।

।। भा०स्क०१०अ०८८।।

वाह रे मूर्खानन्द कमाल ही कर दिया,ऐसा लगता है कि बुद्धि को बेचकर उसकी भांग पी गया हो । क्या कोई व्यक्ति अपने अंग काट कर हवन कर सकता है। शरीर के अंगों को हवन करने से शिवजी प्रसन्न हो गये यह भी एक महा गल्प हैं भला शिव जैसा मूर्ख कोई और होगा,जो अपनी मौत को आप ही बुलाता है।

वसुदेव जी ने ब्रह्मणों को कन्याएं दान में दी

वसुदेव जी ने यज्ञों की समाप्ति पर ऋत्विजों को शास्त्र के अनुसार भारी दक्षिणा, प्रचुर धन,गायें,पृथ्वी,और सुन्दरी कन्याएं भेट दी। यज्ञों में सुन्दरी स्त्रियां अथवा अछूती कन्याएं पौराणिक पंडितों को व्यभिचार के लिए भेंट में दिया जाने की कोई शास्त्रीय विधि नहीं है। औरत कोई जानवर नहीं होती जो किसी को भी भेट में दी जा सकती हो। परन्तु इन वैष्णव पंथी व्याभिचारी ग्रन्थकारों ने सुन्दरी कन्याएं प्राप्त करने के लिए एवं दूसरों को दृष्टान्त देकर अनुकरण कराने के लिए वसुदेव जी से कन्याएं पंडितों को दक्षिणा में देने की गल्प भागवत में लिख मारी। इससे यह सिद्ध है कि भागवतकार कोई चरित्रहीन वाममार्गी सम्प्रदाय का आचार्य था। जिसमें मद्य मांस व मैथुन ही परमधर्म माना जाता है।

यज्ञ कर्त्ता को स्वर्ग में अप्सराएं मिलती हैं।

यज्ञ करने वाले व्यक्ति को स्वर्ग प्राप्त होता है वहां वह अपने पुरुषार्थों के फल स्वरूप देवताओं के भोगों को भोगता है। उसका रूप अत्याकर्षण होता है तथा वह स्वर्गीय अप्सराओं के साथ हर प्रकार के आनन्द को भोगता है। ।। भा०स्क०११,अ०१०।।

पृथ्वी पर वैष्णव मत खूब विषय भोग करता है मरने के बाद स्वर्ग दिलाता है। और वहां भी परम सुन्दरी सैंकड़ों अप्सराएं विषय भोग भोगने को इस मत में मिलती हैं। मुसलमानों के वहिश्त में सत्तर-सत्तर हूरें मिलती हैं। क्योंकि अरब में पुरूष मैथुन भी जारी था अतः बहिश्त में भी बहत्तर-२ लोंडे मिलेगे। वहां शराब की नहरें भी हैं। इन वैष्णवों के स्वर्ग में गिलमों और बहिश्ती शराब की व्यवस्था नहीं की गयी है।

इन्द्र ब्रह्म हत्या से डर कर भागता फिरा

देवराज इन्द्र की बात सुनकर ऋषियों ने उससे कहा देवराज! तुम्हारा कल्याण हो, तुम तनिक भी भय मत करो। क्योंकि अश्वमेध यज्ञ कराकर तुम्हें सारे पापों से मुक्त कर देगें। अश्वमेध यज्ञ के द्वारा सबके अन्तर्यामी सर्वशक्तिमान् परमात्मा नारायण देव की आराधना करके तुम सम्पूर्ण जगत का वध करने के पाप से भी मुक्त हो सकोगे। आचार्य आदि की हत्या करने वाले महापापी,कुत्ते का मांस खाने वाले चाण्डाल और कसाई भी शुद्ध हो जाते हैं। हम लोग अश्वमेघ महायाग का अनुष्ठान करेंगे। उसके द्वारा श्रद्धापूर्वक भगवान की आराधना करके तुम ब्रह्मा पर्यन्त चराचर जगत की हत्या के भी पाप से लिप्त नहीं होंगे। फिर इस दुष्ट को दण्ड देने के पाप से छूटने की तो बात ही क्या है।

इस प्रकार ब्राह्मणों से प्रेरणा प्राप्त करके देवराज इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया था। अब उसके मारे जाने पर ब्रह्म हत्या इन्द्र के पास आयी, उसके कारण इन्द्र को बड़ा क्लेश, जलन सहनी पड़ी। उन्हें एक क्षण के लिए भी चैन नहीं पड़ता था सच है कि जब किसी संकोची सज्जन पर कलंक लग जाता है, तब उसके धैर्य आदि गुण भी उसको सुखी नहीं करंपाते। देवराज इन्द्र ने देखा कि ब्रह्म हत्या साक्षात् चाण्डली के समान दौड़ी आ रही है बुढ़ापे के कारण उसके सारे अंग कांप रहे हैं और क्षय रोग उसे सता रहा है। उसके सारे वस्त्र खून से लथपथ हो रहे हैं वह अपने सफेद बालों को विखेर कर ठहरजा ठहरजा इस प्रकार चिल्लाती आ रही

है देवराज इन्द्र उसके भय से आकाश और दिशाओं में भागते फिरे । अन्त में कहीं भी शरण न मिलने के कारण उन्होंने पूर्व और उत्तर के कौने में स्थित मानसरोवर में प्रवेश कर गये। वहां कमल के तन्तुओं में छिपकर एक हजार वर्ष तक पड़े रहे। इतने दिनों तक भोजन भी नहीं मिला बस यही सोचते रहे कि ब्रह्म हत्या से मेरा छुटकारा कैसे हो । क्या इन्द्र कोई कीड़ा था जो कमल की नाल में घुसा रहा? उसे कहीं किसी वृक्ष या पर्वत की गुफा में छिपने को जगह नहीं मिली। यह कहानी भागवतकार ने इसलिए गढ़ी कि ब्रह्मण कितना भी पापी हो फिर भी राजा या अन्य कोई उसकी हत्या न करे। चाहे वह महापापी ही क्यों न हो। वध करने को केवल ठाकुर,बनिये,शूद्र आदि ही बनाये हैं। जबकि पाखण्ड फैलाने का काम और कुल मिलाकर देश को रसातल में ले जाने का काम ब्राह्मणों ने ही किया है सबसे पहले वध इन्हीं का होना चाहिए। इन मुख्य-मुख्य पाखण्डियों को पकड़-पकड़ कर गोली मारी जाये आज भी सबसे ज्यादा पाखण्डी तथा कथित ब्राह्मण ही हैं ऐसे पापियों के मारने से पाप नहीं बल्कि पुण्य प्राप्त होगा।

स्त्रियां पापी और दुराचारिणी होती हैं

सृष्टि उत्पन्न हो जाने पर ब्रह्मा जी ने देखा कि सभी जीव असंगत से हो रहे हैं तब उन्होंने अपने आधे शरीर से स्त्रियों को बनाया । उन्होंने पुरुषों की मति हर ली। सच है स्त्रियों के चरित्र को कौन जानता है इनका मुंह ऐसा होता है जैसे शरद ऋतु का खिला हुआ कमल, बातें सुनने में ऐसी मीठी होती हैं जैसे अमृत घोल रखा हो, परन्तु हृदय इतना तीखा होता है कि छुरे की पैनी धार इसमें सन्देह नहीं है कि स्त्रियां अपनी लालसाओं की कठपुतली होती है। सच पूछो तो वे किसी से प्यार नहीं करती स्वार्थ वश वे अपने पति पुत्र और भाई को मार देती हैं या मरवा देती हैं। भा०स्क०६ अ०१८।।

भागवतकार की सारी बातें वेतुकी हैं स्त्रियां पुरूषों की मति हरने उनको मूर्ख बनाने को पैदा नहीं की गई । ये तो सृष्टि क्रम को चालू रखने

और नर व मादा के जीवन को सुखमय बनाने के लिए पैदा की हैं। स्त्रियां धर्म,अर्थ,काम और मोक्ष की सिद्धि में साधन रूप होती हैं। उनकी रचना का उद्देश्य महान है भागवतकार की पत्नि ने शायद उसकी एक दो बार पिटायी कर दी होगी इससे उसका अनुभव दुर्भाग्य पूर्ण रहा होगा । वह भी इसलिये कि भागवतकार स्वयं पर स्त्री गामी रहा होगा। जैसा कि उसकी लिखी हुई भागवत से उसके स्वभाव का पता चलता है। यदि कहीं किसी स्त्री ने अपने पति को या पुत्र को त्याग दिया होगा तो क्या हुआ इनसे सौ गुण अधिक पुरुष भी नारी हत्या के दोषी पाये जाते हैं। नारी जाति की निन्दा करना भी भागवतकार का उद्देश्य रहा है।

बलराम द्वारा शूद्र विद्वान की हत्या

बलराम ने देखा कि लोमहर्षण सूत जाति में उत्पन्न होने पर भी उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों से ऊंचे स्थान पर बैठा है और उनके आने पर भी न तो उठकर स्वागत करते हैं न हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं। अतः वे क्रोध में भर गये वे बोले यह नीच जाति का होने पर भी ब्रह्मणों से तथा धर्म रक्षक हम लोगों से ऊपर बैठा है। व्यास देव का शिष्य होकर इसने इतिहास ,पुराण धर्म शास्त्र आदि का अध्ययन किया है, परन्तु इसका अपने मन पर संयम नहीं है। अपने को बड़ा भारी पंडित मानता है नट के समान उसने सारा स्वांग बना रखा है। धर्म का पालन न करने वाले लोग पापी हैं और वध करने योग्य हैं। इसीलिए मैंने अवतार लिया है। बलराम ने हाथ में कुश लेकर उसकी नोक से आक्रमण करके लोमहर्ष का वध कर दिया।

इस कथा में बलराम पर शूद्र होने से एक विद्वान की हत्या का दोष लगाया है । व्यास गद्दी पर बैठा व्यक्ति पूज्य माना जाता है। चाहे कोई भी कितना भी बड़ा व्यक्ति वहां आवे, उसे चाहिए कि गद्दी पर आसीन व्यक्ति को स्वयं अभिवादन करे। यही धार्मिक परम्परा है। लोमहर्षण ने कोई पाप नहीं किया था। क्रोधवश और केवल सूत पुत्र होने से उसकी हत्या कर देना बलराम को अत्याचारी सिद्ध करता है। बलराम पर यह दोष लगाने के बाद भागवताकार लोमहर्षण का पक्ष लेकर बलराम को फटकारता है।

उस हत्या काण्ड पर सारे मुनि लोग हा हा कार करने लगे। उन्होंने बलराम को धिक्कारते हुए कहा कि तुमने यह भारी पाप किया है। हम लोगों ने भी लोमहर्षण जी को यही आसन दिया था। और जब तक यह सत्र पूरा न हो तब तक के लिये कष्ट रहित आयु भी दी थी। आपने अज्ञानता से ब्रह्म हत्या के समान पाप किया है। अतः आप ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित करें क्यों कि आप लोक पावन हैं। बलराम जैसा विद्वान इतना बड़ी गलती नहीं कर सकता था। कथाकार ने क्षणिक उत्तेजना पैदा करके शूद्र जातीय विद्वान का अपमान करा दिया। जब मुनियों ने कष्ट रहित आयु भी प्रदान की थी सत्र पूरा होने तक के लिए तो फिर मुनियों की दी हुई आयु कहां गयी ? सत्र अभी शुरू होने जा ही रहा था वह तो पहले ही मारा गया। शूद्रों द्वारा स्थापित वैष्णव मत में आत्म-उद्धार के लिए यह प्रयास किया गया है जो उचित है। परन्तु इस कथा ने बलराम पर बुद्धि हीनता का दोष तो लगा ही दिया ।

।। इति शम् ।।

आर्य समाज के नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर,सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक, और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए। किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।